चन्दामामा
दिसम्बर १९८१

अप्सरा और नटराज पेंसिलें
रंगबिरंगी डिज़ाइनों में
इनसे लिखना इन्द्रधनुष से लिखना

अप्सरा व नटराज

पेंसिल:लंबी उम्र, मज़बूत दिल.

हिन्दुस्तान पेंसिल्स प्राइवेट लिमिटेड, ७९ पल्टन रोड, बम्बई ४०० ००१

OBM 4714 HN

तितली रानी, तितली रानी, आओ हमारे संग
बाग़ हमारा देखो, देखो फूलों के रंग
पंखों पर तुम्हारे हम जॅम्स सजाएँगे
आज तुमको जॅम्स की तितली बनाएँगे
GEMS
कितनी मधुर कल्पना,
झट ले आओ जॅम्स अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे, मीठी मीठी कल्पनाओं जैसे!
OBM/6842/HN

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये । यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे ।

आपके सहयोग की आशा है ।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "नट का प्रभाव" है। "धूमकेतु" धारावाही समाप्त हो गया है। इस अंक से "भयंकर देश" की शुरुआत हो रही है। यह धारावाही 'धूमकेतु' की घटनाओं के बाद की कथा है। उसके कुछ पात्र इसमें भी दिखाई देते हैं, लेकिन दोनों की कथाएं भिन्न हैं।

अमर वाणी

शतेषु जायते शूरः, सहस्रेषु च पंडितः,
वक्ता दश सहस्रेषु, दाता भवति वा न वा।

[सौ में से एक शूर होता है, हजार में से एक पंडित होता है, वक्ता दस हजारों में से एक होता है, लेकिन यह साबित करना कठिन है कि दानी दस हजारों में भी एक हो सकता है।]

वर्ष : ३४ दिसम्बर १९८१ अंक : ४

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

समय की सूझ

मद्रदेश के राजा प्रचण्ड के पास भारी सैनिक शक्ति के साथ पर्याप्त साधन-संपत्ति भी थी। वे अपने अड़ोस-पड़ोस के राज्यों के साथ मैत्री संबंध स्थापित करने के लिए राजदूतों को नियुक्त किया करते थे।

राजा प्रचण्ड ने बहुत समय पूर्व ही कौशांबी तथा विदेह राज्य दोनों के लिए वज्रसेन को राजदूत के रूप में नियुक्त किया था। उसने कई वर्ष तक बड़ी समर्थता के साथ उस पद को संभाला था। लेकिन अचानक उसका देहांत हो गया।

राजा प्रचण्ड ने उन दोनों देशों के लिए एक नये राजदूत को नियुक्त करना चाहा। इस वास्ते योग्य व्यक्तियों का चुनाव करने के लिए राजा ने उनकी परीक्षा ली। उसमें विकार तथा ललित नामक व्यक्ति सफल निकले।

इसके बाद राजा ने यह निर्णय करना चाहा कि उनमें राजदूत पद के लिए योग्य कौन है? राजा ने उनके सामने एक परीक्षा रखी। उन्हें बुलाकर समझाया—"मैं तुम दोनों को एक भारी जिम्मेदारी सौंप रहा हूँ।" फिर विकार की ओर मुड़कर बोले—"तुम आज ही निकलकर कौशांबी राज्य में चले जाओ। वहाँ के राजा के साथ मैत्री पूर्ण समझौता करके हमारे भेंट-उपहार उन्हें समर्पित कर तुम्हें लौटना होगा। इसके वास्ते आवश्यक दल तुम्हारे साथ भेजा जाएगा।"

इसी प्रकार ललित को विदेह राज्य में जाकर वहाँ के राजा को उपहार सौंपकर मैत्री-संधि स्थापित करके लौटना होगा।

राजा का आदेश पाकर विकार उपहार तथा दल के साथ कौशांबी के लिए चल पड़ा। ललित विदेह राज्य के लिए

विजय कुमार

रवाना हुआ। राजा ने उन्हें समझाया कि कितने दिनों के अन्दर उन्हें लौटकर आना है।

ललित निश्चित अवधि के पहले ही अपने साथ ले गये उपहार और दल के साथ लौटकर राजा के दर्शन करने गया।

राजा प्रचंड ने ललित से पूछा—"क्या विदेह राजा ने हमारे उपहारों को स्वीकार करने से इनकार कर दिया? उनके साथ मैत्री-संधि स्थापित नहीं हुई?"

"महाराज, एक सामंत राजा के साथ संधि कैसी? यह बात तो हमारी सार्व भौमिकता के लिए अपमानजनक होगी न? उपहार लेकर जाते वक़्त मैं यह बात जानता न था। विदेह राजा से मिलने के बाद यह बात मैंने समझ ली। इसलिए मैंने उन्हें उपहार समर्पित नहीं किये और मैत्री-संधि का प्रस्ताव रखे बिना मैं वापस चला आया।" ललित ने उत्तर दिया।

यह जवाब सुनकर राजा तो आश्चर्य में नहीं आये, लेकिन सभी दरबारी अचरज में आ गये। उन लोगों ने सोचा कि राजा ने ललित को विदेह राजा के साथ मैत्री-संबंध क़ायम करने को कहा तो ललित ने इसके विरुद्ध व्यवहार किया है, इसलिए राजा उसको राजदूत पद के लिए अयोग्य मानेंगे।

विकार तो राजा के द्वारा निर्णीत अवधि के दो दिन बाद कौशांबी राजा से प्राप्त उपहार लेकर राजधानी को लौट

आया। राजा ने विकार को देखते ही पूछा– "तुम अवधि के समाप्त होने के बाद देरी से चले आये। कौशांबी राजा ने क्या हमारे साथ मैत्री पूर्ण संधि करने को मान लिया है?"

विकार विजय के गर्व में बोला– "महाराज, मैंने कौशांबी राजा को हमारे साथ मैत्री पूर्ण संधि करने को मनवा लिया है। इसके प्रमाण के रूप में उन्होंने हमारे उपहार स्वीकार किये, साथ ही उन्होंने हमें अमूल्य उपहारों के साथ कुछ दास-दासियों को भी पुरस्कार के रूप में भेजा है। आज तक मुझे अपने अतिथि के रूप में रहने के लिए मुझ पर दबाव डाला है।"

इस पर सारे दरबारी विकार का अभिनंदन करने लगे, तब राजा ने उन्हें रोककर कहा–"मैं हमारे राजदूत के रूप में ललित को नियुक्त कर रहा हूँ। यह बात आप लोगों में से कई लोगों को आश्चर्यजनक मालूम हो सकती है। लेकिन ललित का व्यवहार ही सब प्रकार से उचित है। विदेह हमारे लिए सामंत राज्य है। इसलिए उसके साथ हमें मैत्री पूर्ण संधि करने की कोई जरूरत नहीं है। पहले वह यह बात नहीं जानता था, फिर भी ललित ने वहाँ जाने के बाद यह बात जान ली और वहाँ के राजा को हमारे उपहार दिये बिना वापस लौट आया है।"

"कौशांबी भी हमारा एक सामंत राज्य है। विकार ने इस बात को समझने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि उस राजा को हमारे उपहार सौंप दिये और अर्थहीन मैत्री संधि करके लौट आया है। इससे स्पष्ट है कि एक राजदूत के लिए आवश्यक समय की सूझ उसमें नहीं है। इसलिए यह विश्वास करना कठिन है कि ऐसे व्यक्ति के द्वारा मद्र देश की इज्जत की रक्षा होगी।" राजा प्रचण्ड ने कहा।

राजा की बातों से सभी दरबारी समझ गये कि ललित कैसे एक विवेकशील व्यक्ति है और विकार के द्वारा कैसी भूल हो गई है।

होनहार

कुंतल देश के राजा रविवर्मा के दरबार में एक बार कोशाध्यक्ष का पद खाली हो गया। राजा इसके योग्य व्यक्ति की खोज में थे, तब रानी ने अपने छोटे भाई की सिफ़ारिश करते हुए समझाया–"यह तो पैसे का मामला है, पराये व्यक्ति के बदले हमारा अपना आदमी हो तो ज़्यादा विश्वासपात्र बना रहेगा।"

लेकिन राजा को यह प्रस्ताव बिलकुल पसंद नहीं आया। क्योंकि कोशागार के धन में कुछ कमी-बेशी हो जाय तो अनावश्यक साले के साथ दुश्मनी मोल लेनी पड़ेगी। यों सोचकर राजा ने बस, यही जवाब दिया–"अच्छी बात है, सोचा जाएगा!"

दूसरे दिन सेनापति ने राजा को सुझाव दिया–"महारज, मेरा छोटा भाई शिक्षित है, मगर वह युद्ध-विद्याओं में योग्य साबित न हुआ। अगर आप उसे कोशाध्यक्ष का पद दे तो सेनापति के रूप में मैं, कोशाध्यक्ष के रूप में मेरा छोटा भाई, हम दोनों को आपकी सेवा करने का भाग्य प्राप्त होगा।"

पर राजा को यह प्रस्ताव भी पसंद न आया। बड़े भाई सेनापति तथा छोटा भाई कोशाध्यक्ष बन बैठे तो दरबार में उनका दबदबा बना रहेगा।

उस हालत में विष्णुशर्मा नामक युवक ने राजा के दर्शन करके निवेदन किया–"महाराज, मैंने गणित शास्त्र में विशेष योग्यता प्राप्त कर ली है। आप मेरी परीक्षा लेकर कृपया दरबार में मुझे कोई नौकरी दिलाइये।"

राजा रविवर्मा ने विष्णुशर्मा की अनेक प्रकार से परीक्षा ली, आख़िर उसके जवाबों से संतुष्ट होकर उसे कोशाध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया। यह नियुक्ति

रमा श्रीवास्तव

रानी तथा सेनापति के लिए क्रोध का कारण बनी। थोड़े दिन बाद रानी ने राजा से कहा–"आप ने विष्णुशर्मा को बड़ा मेधावी और ईमानदार मानकर उसे कोशाध्यक्ष के पद पर बिठाया है। लेकिन वह तो अव्वल दर्जे का घूसखोर है। मुझे विश्वस्त रूप से मालूम हुआ है कि उसने थोड़ी देर पहले नौकरी की खोज में आये हुए व्यक्ति से एक हज़ार सिक्के घूस लिया है। घर जाते वक़्त वह ये सिक्के अपने साथ ले जाएगा। आप देरी किये बिना इसी वक़्त कोशागार में जाकर धन का हिसाब देख ले तो एक हज़ार सिक्के आप ज़्यादा पायेंगे।"

राजा ने उसी वक़्त कोशागार में जाकर हिसाब देखा, पर हिसाब बिलकुल ठीक था, एक सिक्का भी ज़्यादा न था। विष्णुशर्मा की तलाशी ली गई, पर उसके यहाँ भी एक सिक्का भी हाथ न लगा।

अपनी तलाशी लेते देख विष्णुशर्मा आश्चर्य में आ गया, पर राजा उस पर संतुष्ट हुए, उसे बताया कि उसकी तलाशी का कारण बाद को बताया जाएगा।

अपनी सखियों के द्वारा समाचार पाने पर भी रानी की समझ में कुछ न आया। क्योंकि रानी ने अपनी एक विश्वासपात्री सखी के द्वारा कोशागार में एक हज़ार सिक्कों की गठरी डलवा दी थी, पर उसका क्या हुआ?

इसी तरह सेनापति के मन में भारी शंका पैदा हो गई। क्योंकि उसने अपने एक बड़े विश्वासपात्र नौकर द्वारा कोशागार से एक हज़ार सिक्कों की गठरी चुरवा ली थी। इसलिए कोशागार के धन में से एक हज़ार सिक्के कम होने थे, पर कम नहीं हुआ, कैसे?

इस तरह दो ईर्ष्यालू व्यक्ति एक नीतिवान का अहित करने गये और अपनी दुष्ट योजनाओं के विफल होने पर इस तरह चुप हो गये जैसे सेंध लगाते वक़्त चोर को बिच्छू डंक मारने से वह चुप रह जाता है।

मकर द्वीप के राजा मंदरदेव एक दिन जब अपने उद्यान वन में टहल रहे थे, तब क़िले के दर्वाजे पर बड़ा कोलाहल सुनाई दिया, जनता की चिल्लाहटों और सैनिकों की चेतावनियों से सारा क़िला गूंज उठा। अचानक होनेवाले उस शोर-शराबा को देख राजा चकित हुए और उसका कारण जानने के लिए मंदरदेव उद्यान वन से क़िले के द्वार की ओर चल पड़े।

राजा मंदरदेव ने क़िले के समीप जाकर देखा कि मंत्री जनता को शांत रहने की सलाह दे रहे हैं। राजा के आगमन को देख कुछ सैनिकों ने इसकी सूचना मंत्री को दे दी। तब मंत्री राजा के समीप पहुँचे।

"यह कैसा कोलाहल है?" राजा ने मंत्री से पूछा।

मंत्री पल भर क़िले के द्वार की ओर देखते रहे, तब बोले–"महाराज, अभी तक इस बात का निर्णय हो नहीं पाया है, पर मेरा अपना विचार है कि इसमें कुछ हद तक सचाई भी हो सकती है। हम सब को पता है कि इधर कुछ दिनों से कुंडलिनी द्वीप में थोड़ी-बहुत अराजकता फैलती जा रही है। लेकिन अब मछुआरों से जो खबर मिली है, वह यह है कि उस द्वीप का राज्याधिकार नरवाहन मिश्र नामक सेनापति ने हस्तगत कर लिया है। अब हमारे राज्य पर हमला करने जा रहा

है। यह खबर पाकर जनता एकदम घबराये हुए थी। मैं उन्हें शांत रहने की सलाह दे रहा हूँ।"

मंदरदेव सर हिलाकर चुप रहें। पर उन्हें लगा कि मंत्री के कथन में थोड़ा-बहुत सत्य है! राजा को मौन देख मंत्री ने सोचा कि राजा खतरे की शंका कर रहे हैं, तब बोला–"महाराज, आगे की सावधानी के लिए उचित प्रबंध करने के लिए सेनापति के पास मैंने खबर भेज दी है। इस खबर की सचाई का पता शाम तक भेदियों के द्वारा लग जाएगा। अब उनके आने का वक़्त हो गया है।'

मंदरदेव ने मंत्री की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि से देखा, पल भर रुककर कहा– "अच्छी बात है! इस समाचार की सचाई का पता लगते ही मुझे खबर दीजिए। मैं आप का इंतज़ार किया करूँगा।" यों कहते राजा राजमहल की ओर आगे बढ़े।

राजा के चले जाने के बाद मंत्री सीधे क़िले के पास पहुँचकर बुर्ज पर चढ़ गया। वहाँ पर खड़े हो देखने पर दूर का समुद्र और उस पर तिरने वाली नावों का पता चलेगा। मंत्री की कल्पना के अनुसार दूर पर पाल उठाई गई एक नाव दिखाई दी। पल भर में यह बात स्पष्ट होती गई कि वह सीधे मराल द्वीप की ओर बढ़ी चली आ रही है।

उधर सेनापति ने मंत्री से समाचार मिलते ही सतर्कता के हेतु सेना का संगठन किया। चारों तरफ़ समुद्र से घिरे मराल द्वीप को जब-तब समीपवर्ती द्वीपों के राजाओं के द्वारा खतरा बना रहता था। इस कारण मराल द्वीप के राजा ने यह कानून बनाया था कि उस द्वीप का प्रत्येक पुरुष थोड़ा-बहुत सैनिक शिक्षण ज़रूर प्राप्त करे।

सेनापति कुछ सैनिकों के साथ समुद्र तट की ओर चल पड़ा। मराल द्वीप का

नौका दल भी ज़रूरत पड़ने पर दुश्मन की नावों के साथ लड़ने के लिए तैयार हो रहा था। ढिंढोरे व शंखनादों द्वारा हर एक नाविक को समुद्र तट पर स्थित अपनी नावों में पहुँचने का आदेश दिया गया।

क़िले के बुर्ज पर खड़े होकर इन सारी तैयारियों को देखने वाले मंत्री सेनापतियों की सावधानी व कर्तव्य निष्ठा देख बहुत प्रसन्न हुए। मगर मंत्री की यह प्रसन्नता थोड़ी ही देर में घबराहट में बदल गई। भेदियों की नाव के पीछे थोड़ी दूर पर ऐसा दिखाई पड़ा मानों काले बादल छा गये हो। मंत्री ने सोचा कि कहीं यह आंधी की सूचना देने वाले बादल हो। फिर मंत्री ने समझ लिया कि ये सब तूफान के बादल नहीं, बल्कि कुछ युद्ध की नौकाएँ दल बांधकर मराल द्वीप की ओर चली आ रही हैं! दूसरे ही क्षण में उन युद्ध की नावों से काला धुआँ निकल आया। थोड़ी देर में तेल में भिगोये गये कपड़े लपेटकर आग लगाने से जलनेवाले कुछ बाण लगातार भेदियों की नाव पर गिरने लगे।

तब जाकर मंत्री ने अच्छी तरह से समझ लिया कि मछुआरों ने जो खबर दी, वह सच है! पहले किसी तरह की चेतावनी तक दिये बिना पराये देशों पर हमला करने का नया संप्रदाय-कुंडलिनी राज्य पर अधिकार करने वाले नरवाहन

अपनी नौकाओं को आगे बढ़ाने लगे। थोड़ी ही देर में समुद्र तट से चार-पांच कोसों के अन्दर ही कुंडलिनी द्वीप तथा मराल द्वीपों के नौका दल के बीच युद्ध छिड़ गया।

इस बीच सैनिक क़िले के बुर्ज पर चढ़ने लगे। अगर किसी कारण से मराल द्वीप का नौका दल हार गया, तो नगर की रक्षा करने के लिए पहले ही सावधानी बरतने के वास्ते सैनिक बुर्ज पर भेजे गये। उन सैनिकों में से एक को बुला कर मंत्री ने राजा को युद्ध का समाचार सुनाने भेजा।

मिश्र ने शुरू किया। इस पर मंत्री ने नाराज होकर दांत पीसे। एक-दो सौ वर्षों के पूर्व शाक्तेय नामक मांत्रिक ने इसी प्रकार युद्ध की घोषणा तक किये बिना कई द्वीप राज्यों को लूट लिया था। उस वक़्त कई राजाओं ने यह सोचकर अपने को संभाल लिया कि वह शाक्तेय कोई राजवंशी नहीं है, बल्कि मांत्रिक है, इसलिए उसने अधर्मपूर्ण आचरण किया है।

मंत्री इन्हीं विचारों में डूबे हुए थे, तभी मराल द्वीप का नौका दल अपने देश की एक नाव पर होने वाले ख़तरे को देख हमला कर बैठा, सैनिक सिंहनाद करते

इस बीच समुद्र में दोनों दलों के बीच भीषण नौका युद्ध चल रहा था। दोनों पक्षों के दल प्राणों का मोह छोड़कर लड़ने लगे। तेल में भिगोये गये कपड़े बाणों से लपेट लिये गये और उनमें आग लगा कर दोनों पक्षों के लोग परस्पर नावों पर फेंकने लगे। जिन नौकाओं से लपटें निकल रही थीं, उन नौकाओं के सैनिक समुद्र में कूदने लगे। जलने वाली नौकाओं की ज्वालाओं को बुझाकर उन पर अधिकार करने के लिए शत्रु पक्ष के सैनिक उन पर सवार होने लगे।

क़िले के बुर्ज पर से इन दृश्यों को देखने वाले मंत्री के मन में अपने दल

"क्या हुआ? दौड़कर क्यों आते हो?" मंत्री ने सैनिक से व्यग्रतापूर्वक पूछा।

"राजा का पता नहीं चल रहा है!" सैनिक ने कांपते स्वर में जवाब दिया।

"यह खबर तुम्हें कैसे मिली?" मंत्री ने कठोर स्वर में पूछा।

"महानुभाव, मैंने राजमहल में पहुँच कर देखा, वहाँ पर खूब हलचल मची हुई थी। दासियों ने बताया कि कुछ मिनटों के पहले राजा के कमरे से मदद के लिए चिल्लाहटें सुनाई दी थीं। राज भटों ने सारे राजमहल में राजा की खोज की। राजा के दोनों अंग रक्षक भी दिखाई नहीं दे रहे हैं।" सैनिक ने एक ही सांस में सारा वृत्तांत कह डाला।

अंग रक्षकों के गायब होने का समाचार सुनते ही मंत्री के मन में संदेह पैदा हुआ कि राजा के साथ कोई धोखा-दगा हो गया है। मंत्री ने सोचा कि संभवतः कुंडलिनी राज्य पर अधिकार करने वाले नरवाहन मिश्र के षडयंत्र का प्रभाव हो या उसकी नई कूटनीति की कोई चाल हो। साथ ही मंत्री के मन में यह भी संदेह पैदा हुआ कि जब राजा राजमहल में दिखाई नहीं दे रहे हैं तो कहीं उन्हें क़िले के बाहर ले गये हों।

के जीतने की आशा जाती रही। मंत्री के मन में सिर्फ़ यही एक आशा बनी रही कि गुप्तचरों से भरी नाव अगर सुरक्षित समुद्र के तट पर पहुँच जाय तो वह कुंडलिनी राज्य में हुए परिवर्तन, नरवाहन मिश्र की राज्य व्यवस्था तथा उस राज्य की जनता की मनोदशा को वास्तविक रूप में समझ सकता है। इसीलिए मंत्री बड़ा व्यग्र था।

इतने में मंत्री के पीछे किसी के क़दमों की आहट सुनाई दी। उसने सर घुमाकर पीछे की ओर देखा, राजा के पास युद्ध का समाचार देने गया हुआ सैनिक हांफते, उधर ही चला आ रहा है।

इस शंका के पैदा होते ही मंत्री ने अपने साथ कुछ सैनिकों को ले लिया। क़िले के एक बुर्ज से दूसरे बुर्ज तक दौड़ते हुए बाहर के कंदक की ओर ताकने लगा। एक स्थान पर क़िले की दीवार पर लटकने वाला रस्सा और उसे पकड़ कर नीचे उतरने वाले तीन आदमी उसे दिखाई दिये।

उसी क्षण मंत्री के साथ रहने वाले सैनिक चिल्ला उठे–"महामंत्रीजी, देखिये, महाराजा और उनके अंग रक्षक!"

अब क्या किया जाय? मंत्री के सामने एक जटिल समस्या पैदा हो गई! वह चाहे तो क़िले की दीवार पर स्थित खूंटे से लटकने वाले रस्से को कटवा सकता है, मगर ऐसा करने पर महाराजा, तथा उन्हें बन्दी बनाकर ले जाने वाले द्रोही अंग रक्षक कंदक में गिर जायेंगे। ऐसा न होकर सिर्फ़ देखते रह जाय, तो वे दोनों अंग रक्षक राजा को बन्दी बना कर बेरोकटोक दुश्मन के राज्य में लेते जायेंगे।

मंत्री महोदय इसी पेशोपेश में परेशान था, तब एक सैनिक चिल्ला उठा–"महामंत्रीजी, उधर देखियेगा! कंदक के किनारे ही तीन घोड़े एकदम तैयार खड़े हैं!"

मंत्री ने उस ओर अपनी नज़र दौड़ाई, लगाम कसे तीन घोड़े उसे दिखाई दिये। मंत्री समझ गया कि मौक़ा देख राजा को बन्दी बनाकर ले जाने के लिए नरवाहन मिश्र ने अपने सेवकों को पहले ही राजमहल में पहुँचा दिया है। उसने समुद्र की ओर देखा, गुप्तचरों वाली नाव तट के समीप आ रही है और कुंडलिनी द्वीप की दो युद्ध नौकाएँ भी तट की ओर तेजी के साथ पहुँच रही हैं।

मंत्री ने भांप लिया कि हालत बहुत ही नाज़ूक है। उसने सैनिकों की ओर मुड़ कर आदेश दिया–"तुम लोगों में से चार-पांच लोग घोड़ों पर सवार हो राजा की

रक्षा करने के लिए चले जाओ! इस दुर्घटना की खबर तुम लोग क़िले के बाहर की प्रजा पर प्रकट मत करो। जल्दी चले जाओ!"

यह आदेश पाकर कुछ सैनिक क़िले के बुर्ज के ऊपर से नीचे की ओर दौड़ पड़े। मंत्री ने कंदक की ओर देखा। तब तक द्रोही अंग रक्षक राजा को कंदक पार करा कर घोड़ों की ओर ले जा रहे थे। राजा आगे चल रहे थे और दोनों अंग रक्षक अपने हाथों में तलवार लिये उनके पीछे चल रहे थे। थोड़ी देर में उन लोगों ने राजा को एक घोड़े पर सवार कराया, और उसके हिलते ही उसके पीछे वे अपने घोड़ों को दौड़ाने लगे। मंत्री ने समझ लिया कि वे लोग राजा को समुद्री तट की ओर ले जा रहे हैं।

इधर राजा की रक्षा करने के लिए निकले चार सैनिक घोड़ों पर सवार हो क़िले के द्वार से बाहर निकलकर राजा को बन्दी बनाकर ले जाने वाले द्रोहियों की ओर अपने घोड़ों को दौड़ाने लगे। घोड़ों की टापों की आहट पाकर द्रोही अंग रक्षकों ने पीछे की ओर मुड़कर देखा और राजा की पीठ पर अपनी तलवारों को टिकाकर उनके घोड़े को तेजी के साथ दौड़ाने का आदेश दिया।

क़िले के बुर्ज पर से उस दृश्य को देखने वाले मंत्री ने एक बार बन्दी बने राजा की ओर देखा, फिर तट की ओर बढ़ने वाली शत्रु नौका को देखते हुए पुकारा–"मराल देवी! क्या आप अपने भक्तों की कठिन परीक्षा ले रहीं हैं?" यों कहकर अपनी छाती पर हाथ रखे मंत्री ने आसमान की ओर दृष्टि दौड़ाई।

दूसरे ही क्षण प्रलयकालीन गर्जन के साथ बादलों की घड़घड़ाहट और बिजलियों की कड़कड़ाहट शुरू हुई। जिनसे सारा मराल द्वीप गूंज उठा। मंत्री चकित हो खड़े-खड़े इस दृश्य को देखता रह गया। (और है)

नट का प्रभाव

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, कुछ लोग अपनी जीविका के हेतु जो पेशे अपनाते हैं, उसमें अपार धन और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के बाद अचानक उसे त्यागकर अज्ञातवास में चले जाते हैं! इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को कृष्णकांत नामक एक मशहूर नट की कहानी सुनाऊँगा। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल यों सुनाने लगा: पुष्पक देश का राजा पुष्पदंत बड़ा अत्याचारी था। इस वज़ह से गजेन्द्र नामक एक युवक ने जनता का संगठन किया और राजा को गद्दी से उतारा। इस समय पुष्पक देश पर गजेन्द्र के वारिस राज्य कर रहे हैं।

बेताल कथाएँ

गजेन्द्र के बारे में कई कवियों ने काव्य और कहानियाँ लिखीं।

पुष्पक देश में कृष्णकांत नामक एक महान नट रहा करता था। गजेन्द्र की अद्भुत साहसिक जीवनी ने उसे आकृष्ट किया। उसने खुद एक नाटक रचा, कुछ युवकों को प्रशिक्षण दिया और गाँव-गाँव में जाकर उसका प्रदर्शन करने लगा। गजेन्द्र पात्र का वह खुद अभिनय करता था। लोग बड़े ही उत्साह के साथ उस नाटक को देखते थे। वे यह सोचते थे कि कृष्णकांत की वजह से वे लोग प्राचीन काल के गजेन्द्र के साहस, पराक्रम और उसकी देश भक्ति की गाथा जान पाते हैं।

उस समय के राजा नरेन्द्र को कृष्णकांत का समाचार मिला। राजा ने उसे अपने दरबार में बुला भेजा और उसका नाटक देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उसका अभिनंदन किया। उसे अनेक उपहार देकर अपने दरबार का मुख्य अभिनेता नियुक्त किया। वैसे कृष्णकांत राज दरबारी था, फिर भी वह साल में छे महीने देशाटन करते हुए अपने नाटकों का प्रदर्शन किया करता था।

एक बार कृष्णकांत ने एक गाँव में अपने नाटक का प्रदर्शन किया, उसे देख एक युवती उसके पास पहुँची, अपनी बगल में खड़ी एक और युवती को दिखाते हुए बोली–"आपका अभिनय अद्भुत है। मेरी बहन आपके साथ शादी करना चाहती है। मैं चाहती हूँ कि कल आप अकेले मेरे गाँव आकर इस संबंध में मेरे माता-पिता से बात करें।"

इसके बाद उसने अपने नाम, गाँव तथा अपने माता-पिता के नाम बताया, अंत में कहा–"मेरी बहन का नाम मालती है!"

मालती देखने में बड़ी सुंदर थी। इसलिए कृष्णकांत ने मालती की बड़ी बहन के निमंत्रण को बड़ी खुशी से स्वीकार किया। दूसरे दिन मालती के गाँव के लिए चल पड़ा। वह एकदम

जंगल का रास्ता था। कृष्णकांत का नाटक देखने के लिए जो बहुत सारे लोग आये थे, वे सब उसके साथ थे।

मालती के माता-पिता ने बड़े ही आदर के साथ कृष्णकांत का स्वागत किया और कहा–"यह हमारे लिए खुशी की बात है कि तुम हमारे दामाद बन जाय, मगर हमारी एक शर्त है कि तुम आइंदा नाटक खेलना बंदकर हमारे ही घर में रहे!"

मालती के माता-पिता के पास काफी जमीन-जायदाद थी, साथ ही उनके कई तरह के व्यापार भी थे। इसीलिए वे चाहते थे कि उनका दामाद घर पर ही रहकर उस सारी संपत्ति की देखभाल किया करे।

इस पर कृष्णकांत ने मालती से पूछा–"मैं एक मशहूर अभिनेता हूँ। मैं अपनी इस कला को व्यर्थ बनाना नहीं चाहता। तुम्हारे माता-पिता को मेरे द्वारा नाटक खेलना कतई पसंद नहीं है। ऐसी हालत में इस संबंध में तुम्हारा क्या विचार है?"

मालती ने साफ़ कह दिया कि कृष्णकात का नाटक खेलना उसे भी पसंद नहीं है। इस पर वह सात दिन के अन्दर फिर मिलने की बात कहकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा। इस बार वह अकेले ही यात्रा कर रहा था। जंगल के रास्ते में चार डाकुओं ने उसे रोका। क्योंकि कृष्णकांत क़ीमती जरीदार कपड़े पहने हुए था। उसके हाथों में सोने के कड़े थे और गले में सोने की माला पड़ी थी। डाकुओं को देखते ही वह थर-थर कांपने लगा।

"तुम जल्दी-जल्दी अपने हाथ के कड़े, सोने की माला और अंगूठी उतार कर हमें दे दो। जरीदार कपड़े भी उतार कर दे दो।" डाकुओं ने तलवार खींचते हुए गरजकर कहा।

उस समय अचानक वहाँ पर एक युवक आ धमका। उसके हाथ में किसी प्रकार का हथियार न था। उसने ताल ठोंक

अपना लक्ष्य बनाया है!" युवक ने जवाब दिया।

"तुम इस वक़्त यहाँ पर कैसे और क्यों आये?" कृष्णकांत ने पूछा।

"मैंने सुना है कि पड़ोसी गाँव में कृष्णकांत नामक एक महान अभिनेता हैं। उनके दर्शन करने के ख्याल से चल पड़ा।" एकाग्र ने जवाब दिया।

कृष्णकांत ने पहले सोचा कि अपना परिचय दे, मगर उस युवक को छेड़ने के ख्याल से पूछा–"नाटक खेलने वाले उस साधारण नट से तुम्हारा क्या मतलब है?"

"वे तो सिर्फ़ नाटक खेलने वाले नहीं हैं, एकदम अवतार पुरुष हैं! गजेन्द्र के वेष में मैंने उन्हें देखा। उस वक़्त मेरे भीतर जो जोश उमड़ पड़ा, उसे क्या बताऊँ? उसी दिन से मैंने गजेन्द्र की तरह पीड़ित प्रजा की मदद करने का निश्चय किया। इसलिए में कृष्णकांत से मिलकर निवेदन करना चाहता हूँ कि वे मेरे जैसे और अनेक लोगों को प्रभावित करने के लिए अपने नाटकों का सर्वत्र प्रदर्शन करें।" एकाग्र ने जवाब दिया।

"तुमने जब नाटक देखा है, तब यह बात उनसे क्यों न पूछी?" कृष्णकांत ने पूछा।

"पहले मुझे लगा कि मैं भी गजेन्द्र की तरह तैयार हो जाऊँ। इस वक़्त में जो

कर डाकुओं को ललकारा। कृष्णकांत ने उस युवक को कभी देखा न था।

वह युवक डाकुओं के साथ जूझ पड़ा। वह बड़ी कुशलता के साथ एक प्रशिक्षित मल्ल योद्धा की तरह लड़ता रहा और आखिर एक डाकू के हाथ की तलवार छीन ली। इसे देख बाकी डाकू डर गये और वहाँ से भाग खड़े हुए।

"तुम कौन हो! ऐन मौक़े पर एक देवता की तरह आकर तुमने मुझे बचाया।" कृष्णकांत ने उस युवक से पूछा।

"मेरा नाम एकाग्र है। मैंने यथा शक्ति अन्याय और अत्याचारों को रोकना

साहसिक कार्य कर रहा हूँ, इन कार्यों की बड़ी प्रशंसा होती है, इसका कारण वे ही महानुभाव हैं, इसलिए उनसे मिलने की प्रेरणा जगी, इसीलिए मैं उनसे मिलने जा रहा हूँ।" एकाग्र ने समझाया।

ये बातें सुनने पर कृष्णकांत का चेहरा पीला पड़ गया। वह बोला–"मैं भी कृष्णकांत से मिलने के लिए उनके गाँव में गया। वे वहाँ पर न थे, राजधानी में गये थे!" यों उसने एकाग्र को बताया, इसके बाद वह मालती के गाँव पहुँचकर उससे बोला–"मालती, मैंने तुम्हें पाने के लिए आइंदा नाटक खेलना बंद करने का निश्चय कर लिया है।"

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर पूछा–"राजन, कृष्णकांत ने बड़ी जल्दी ही अपने विचार को बदलकर मालती के साथ विवाह करने को क्यों मान लिया? क्या वह नाटक खेलने से ऊब गया है? या यश-प्रतिष्ठा के प्रति उपेक्षा का भाव पैदा हो गया है? इस संदेह का समाधान जान कर भी न देंगे तो आपका सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया–"कृष्णकांत के विचार बदलने के कारण ये नहीं हैं। उसने अपने गजेन्द्र पात्र के द्वारा कई युवकों को अन्याय और अत्याचारों का जान पर खेलकर सामना कर सकने वाले वीर तैयार किये। पर डाकुओं के सामने उसने एक कायर जैसा व्यवहार किया है, इस अनुभव के द्वारा कृष्णकांत को लगा कि वह जिस गजेन्द्र पात्र का अभिनय करता है, उसका प्रभाव उस पर नहीं पड़ा है। अगर उसका असली रूप सबको मालूम हो जाय तो आज तक गजेन्द्र पात्र लोगों पर जो प्रभाव डालता आ रहा है, वह जाता रहेगा। इसीलिए उसने मालती के साथ विवाह करके अज्ञात रूप में जीने का निश्चय कर लिया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

असली कारण

एक जमीन्दार के यहाँ एक आदमी नया रसोइया बनने आया। जमीन्दार को वह आदमी बड़ा ही भोला मालूम हुआ, जमीन्दार ने कई तरह के सवाल करके उसके बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी प्राप्त की, फिर भी उसका संदेह बना रहा, अंत में उसने पूछा–"तुम कहते हो कि तुमने कई जगह रसोइया का काम किया है, फिर सभी जगह तुम्हारी नौकरी क्यों छूट गई? क्या तुम अक्सर गैरहाज़िर रहते थे?"

"रसोइया अगर बराबर गैरहाजिर रहे तो घर भर के लोगों को तकलीफ़ होती है न?"

"तब तो रसोई बनाते वक्त उसका स्वाद देखने के ख़्याल से सारी रसोई खा जाने की तुम्हारी कोई बुरी आदत तो नहीं है?" जमीन्दार ने पूछा।

"रसोई बनाते वक्त मैं आख़िर कितना खा सकता हूँ? घर भर के लोगों के खाने के बाद जो कुछ बचता है, सारा मैं ही तो खा लेता हूँ?"

"तब रसोई का सामान चुराने की बुरी लत तो नहीं रखते?" जमीन्दार ने पूछा।

"जब सारा रसोई घर मेरे हाथ में है, तब मैं ऐसा क्यों करूँगा?" रसोइये ने कहा।

"तब तो सब जगह तुमने अपना काम क्यों छोड़ दिया?" जमीन्दार ने खीझकर पूछा।

"मेरा मन स्थिर नहीं है, इसलिए जब तब मैं यह बात भूल जाता हूँ कि मैं एक रसोइया हूँ; इसलिए माली का काम करने या घोड़ों की मालिश करने चला जाता हूँ। इस वजह से मुझे अक्सर नौकरी से हटाते रहते हैं।" रसोइये ने बताया।

मंत्री का पद

चित्रपुरी राज्य का मंत्री सोमेश्वर दो पीढ़ियों के राजाओं को शासन कार्यों में उचित सलाह देते हुए एक समर्थ मंत्री के रूप में मशहूर हुआ।

सोमेश्वर जब सत्तर साल का हुआ, तब उसने मंत्री-पद से हटने का निर्णय करके यह बात राजा अवंत को बताई। राजा अवंत चार साल पहले राज गद्दी पर बैठे थे।

बड़े ही योग्य तथा राजभक्त वृद्ध मंत्री को पद से हटते देख राजा को बड़ा दुख हुआ। फिर भी वे लाचार थे, इसलिए बोले–"महामंत्रीजी, आपकी जगह एक योग्य मंत्री का चुनाव आप ही कीजिएगा।"

सोमेश्वर ने इसे नहीं माना। वह बोला–"हमारी पीढ़ी खतम हो गई है, नई पीढ़ी के लोगों की शक्ति और सामर्थ्य के बारे में मैं ज़्यादा नहीं जानता। इसलिए मंत्री के चुनाव के बारे में आप ही सोच-समझकर निर्णय लीजिए।"

राजा अवंत ने मंत्री पद के योग्य व्यक्तियों के वास्ते सारे देश में ढिंढोरा पिटवा दिया। ढिंढोरा सुनकर कई शिक्षित व्यक्ति मंत्री-पद के उम्मेदवार के रूप में आये, जिनमें अनंतवर्मा, कपिलनाथ और राममिश्र नामक युवक राजा की दृष्टि में योग्य मालूम हुए।

राजा अवंत खूब सोच-विचार कर एक निर्णय पर पहुँचे। इसके बाद सबसे पहले राजा ने अनंतवर्मा को अपने पास बुला भेजा और उससे पूछा–"तुम जब मंत्री का पद संभालोगे, तब एक गरीब परिवार तुम्हारे पास आकर यह पूछे कि वे लोग दो दिनों से भूखे हैं, उन्हें

रामदयाल सिंह

किस तरह की मदद दें, तब तुम क्या करोगे?"

अनंतवर्मा पल-दो पल सोचता रहा, तब बोला–"महाराज, मैं उस गरीब परिवार की ऐसी मदद करूँगा जिससे वह परिवार फिर कभी खाने के अभाव की तक़लीफ़ का अनुभव न करें!"

इसके बाद राजा ने कपिलनाथ को बुलाकर यही सवाल किया। कपिलनाथ ने पल भर सोचकर कहा–"महाराज, मैं सबसे पहले उस परिवार की इस बुरी हालत का पता लगाऊँगा, तब न केवल उस परिवार की मदद करूँगा, साथ ही इस बात का इंतजाम करूँगा कि राज्य भर में कोई इस बुरी हालत का शिकार न हो।"

इसके बाद राजा ने राममिश्र को बुलवा कर उससे भी यही सवाल किया, राममिश्र ने कहा–"महाराज, मेरा मंत्रित्व काल के समय देश-भर में किसी के लिए भी अगर खाना व कपड़े की तंगीं हो जाय और इस बात की खबर मुझे मिले तो मैं तुरंत अपने पद से इस्तीफा दे दूंगा।"

यह जवाब सुनकर राजा अवंत आश्चर्य में आकर बोले–"अपने मंत्री-पद को ही त्याग दोगे? ऐसा क्यों?"

आपके अनेक वर्षों के शासन में, तिस पर वृद्ध महामंत्री के मार्ग दर्शन में हमारा राज्य सुसंपन्न रहा है, ऐसी हालत में राज्य-भर में आज तक कोई भी खाने के अभाव में परेशान न रहा, ऐसी हालत में अगर मेरे मंत्री बनने के बाद थोड़े से लोग भी सही, ऐसी बुरी हालत के शिकार हो जाते हैं तो इसका मतलब है कि मंत्री के रूप में मेरी असमर्थता ही इसका कारण है। इसीलिए मैं मंत्री का पद त्यागकर किसी योग्य और समर्थ व्यक्ति को वह पद प्राप्त हो जाय, इस बात का प्रयत्न करूँगा।" राममिश्र ने जवाब दिया।

यह जवाब सुनकर राजा बहुत खुश हुए और उसी दिन राममिश्र को चित्रपुरी राज्य के मंत्री के पद पर नियुक्त किया।

दामाद की मुसीबतें

सवेरा होते ही अपनी सास और साली के आने का समाचार सुनकर नारायण का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। नारायण ने इधर दस दिन पहले ही अपनी पत्नी रुक्मिणी के साथ शहर में घर बसाया था।

नारायण ने अपनी पत्नी से पूछा–"क्या तुम्हारे घर के लोग दस दिन के अन्दर तुम्हें देखने के लिए लालायित हो उठे?"

रुक्मिणी ने हँसकर जवाब दिया–"ऐसी कोई बात नहीं जी! सुनते हैं कि मेरी माँ की तबीयत ठीक नहीं है। इसलिए वह आब-हवा बदलने के ख्याल से शहर में इलाज़ कराने के लिए आ रही हैं। साथ ही मेरे पिताजी का विचार है कि मेरी बहन के लिए शहर में रहने पर कोई अच्छा रिश्ता क़ायम हो सकता है! इसी विचार से उन दोनों को हमारे घर भिजवा रहे हैं!"

यह जवाब पाने पर नारायण का दिल बैठ गया। उसे जो तनख्वाह मिलती है, वह चार आदमियों के खाने और इलाज के लिए पर्याप्त न होगी। लेकिन नारायण स्वभाव से संकोचशील था, इस कारण वह चुप रह गया।

थोड़ी देर में नारायण की सास और साली आ पहुँचीं। घर में क़दम रखते ही सास ने हांफते हुए गिलास भर दूध मंगवा कर पी लिया, तब बोली–"बेटी, तुम्हारे पिताजी कहते थे कि हमारे कोई पुत्र न रहें तो क्या हुआ? हमारे दामाद ही तो हमारे बेटे हैं। इसीलिए तुम्हारे पिताजी ने बहन की शादी की जिम्मेदारी और मेरे इलाज का बोझ दामाद पर डाल दिया है।"

साली की शादी की जिम्मेदारी की खबर सुनते ही नारायण का कलेजा कांप

शोभा गुप्त

उठा, फिर भी हँसते हुए बोला–"ये कोई बड़ी भारी जिम्मेदारियाँ थोड़े ही हैं!"

"मैंने घर से निकलते वक़्त ही कह दिया था न माँ, बहनोई का मन अमृत के समान है, वे तो देवता हैं, देवता!" यों कहते खाट पर धम्म से लुढ़क पड़ी।

एक हफ़्ता बीत गया। सास की बीमारी का पता नारायण को न चला। उसे बढ़िया खाना दिया जा रहा था, फिर भी वह ऐसा व्यवहार करती थी, मानो सारे दिन उपवास करती हो! नारायण का मकान शहर के बीच में था, इसलिए अड़ोस-पड़ोस की महिलाओं के साथ बातचीत करके उसका वक़्त काटने के लिए बड़ा अनुकूल पड़ गया था।

महीना समाप्त होने के पहले ही नारायण को इधर उधर से कर्ज़ लाना पड़ा। एक दिन नारायण के सह कर्मचारी वीरभद्र ने उसे समझाया–"देखो नारायण, बुरे व्यसन आदमी के पतन के कारण बन जाते हैं, सावधानी से रहो।"

नारायण ने अचरज में आकर पूछा–"आप को किसने बताया कि मैं बुरे व्यसनों का शिकार हो गया हूँ?"

"तुम जो कर्ज़ ले रहे हो, वही बताता है!" वीरभद्र ने झट जवाब दिया। इस पर नारायण ने अपना सारा हाल सुनाया। वीरभद्र पल भर सोचकर बोला–"शहर के छोर पर मेरे काका का मकान है। उसे किराये पर ले लो।

किराया भी एकदम सस्ता है।" साथ ही इसके द्वारा होने वाले फायदों के बारे में वीरभद्र ने विस्तारपूर्वक कह सुनाया।

नारायण ने दूसरे ही दिन सब को बताया कि मकान का मालिक घर खाली करने को बता रहा है और वह वीरभद्र के काका के मकान में सपरिवार आ पहुँचा। उस मकान के अन्दर कुआँ न था। गली के छोर पर स्थित कुए से पानी भरकर लाना पड़ता था।

अड़ोस-पड़ोस की महिलाओं से बात-चीत करके समय काटने के लिए कोई सुविधा न थी। इसलिए नारायण की सास का वक़्त बड़ी मुश्किल से कटने लगा। साली ने शिकायत करना शुरू किया कि जंगल जैसे इस मकान में कैसे समय काटा जा सकता है! उल्टे रुक्मिणी घर के काम-काज अपनी माँ और बहन से कराने लगी।

"महाशय, आपका उपाय खूब कारगार सिद्ध हुआ!" इन शब्दों के साथ नारायण ने वीरभद्र की तारीफ़ की।

"दोस्त, अभी कुछ नहीं हुआ! मैं आज शाम को तुम्हारे घर आ जाऊँगा! तुम अपनी सास को एक वैद्य के रूप में मेरा परिचय कराओ।" वीरभद्र ने अपना उपाय बताया।

उस दिन शाम को नारायण वीरभद्र को अपने घर ले आया। वीरभद्र नारायण की सास की जांच करने का अभिनय करते

बोला–"माताजी, आपके फेफड़े एकदम बिगड़ चुके हैं! कम से कम तीन महीने तक आप को नमक-मिर्च और मसाले के बिना तरकारी सिर्फ़ मुट्ठी भर चावल के साथ मिलाकर खाना होगा। अगर आप इस पथ्य का पालन न करेंगी, तो आपकी जान के लिए खतरा पैदा हो सकता है! फिर आपकी जैसी मर्जी!"

ये शब्द सुनने पर नारायण की सास का शरीर शिथिल पड़ गया। नारायण की साली को अपने पास बुलाकर वीरभद्र ने समझाया–"सुनो बेटी! इस छोटी-सी उम्र में तुम्हारा ऐसा भारी शरीर हो गया है। तुम्हें हृदय की बीमारी के होने का खतरा है! नारायण, तुम इस लड़की को समझाओ कि यह रोज दो-तीन कोस दौड़ती रहे। कुछ दिन तक चावल खाना बंद करना, रोटी खाना ज्यादा मुनासिब होगा।" यों समझाकर वीरभद्र चला गया।

वीरभद्र का इलाज एक हफ़्ता ही चला। इस बीच साली ने अपनी माँ से कहा–"माँ, यहाँ पर ज्यादा दिन रहने से मेरी शादी की बात तो दूर रही, उल्टे लगता है कि मेरी जान ही चली जायेगी।"

"मेरी हालत भी तुमसे कुछ कम नहीं है।" यों कहते सास भी अपने आँसू पोंछने लगी। ये बातें सुन नारायण ने कहा–"यह आप क्या कह रही हैं? इतनी जल्दी चली जायेंगी? ससुरजी ने मुझे जो जिम्मेदारी सौंप दी है, उसका क्या होगा?"

सास ने खीझकर कहा–"बेटा, तुम पागल नहीं हुए हो? बेटी की शादी और पत्नी का इलाज कराने की जिम्मेदारी तुम्हारे ससुर की है। अपनी जिम्मेदारी को दूसरों पर डालने से उसे उठाने के लिए तैयार होने वाले तुम जैसे भोले अकेले को ही मैंने देखा है।" यों कहकर सास उसी वक़्त किराये की गाड़ी मंगवाकर अपनी बेटी को साथ ले अपने गाँव चली गई।

इसके बाद दूसरे ही दिन नारायण ने सभी सुविधाओं से पूर्ण पुराने मकान में अपना परिवार बदल डाला।

मंत्र की महिमा

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी राज्य पर शासन करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व ने एक गाँव में चर्मकार के रूप में जन्म लिया। वे अपने पेशे को चलाते हुए एक सिद्ध के आश्रय में गये और उनके द्वारा एक अपूर्व मंत्र सीख लिया।

उस मंत्र की महिमा के द्वारा बोधिसत्व किसी भी समय आम के पेड़ों में आम उगा सकते थे। वे रोज सवेरे एक टेढ़ी लाठी कंधे पर डाल जंगल में एक आम के पेड़ के पास पहुँच जाते। वहाँ पर पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़े हो मंत्र-पाठ करते थे। इसके बाद डालों पर मंत्र-जल छिड़क देते थे। दूसरे ही क्षण आम की डालों में कोंपलें उग आतीं, पुष्पित हो फल लग जाते।

एक दिन जब बोधिसत्व आम के पेड़ में फल उगा रहे थे, तब दाभों की खोज में जंगल में आये हुए सुनंद नामक एक ब्राह्मण युवक ने देखा। वह युवक जंगल के समीप के एक अग्रहार का निवासी था। वह पढ़ने-लिखने में कच्चा निकला, मगर वह हमेशा इस बात का सपना देखा करता था कि किसी देवी की कृपा से मिनटों में वह पंडित बन जाय और सोना व चांदी पाकर वैभव पूर्ण जीवन बिता दे।

बोधिसत्व जब जंगल से घर लौटे, तब सुनंद ने बोधिसत्व के हाथ से टेढ़ी लाठी और आम की गठरी लेकर भीतर पहुँचा दिया। इसके बाद उसने अपना परिचय दिया और बड़ी लगन के साथ उनके घर के काम-काज देखने लगा।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन बोधिसत्व ने अपनी पत्नी से कहा– "जानती हो, यह लड़का हमारे आश्रय में क्यों आया है? उसके मन में सभी

मौसमों में आम की सृष्टि कर सकने वाले मंत्र सीखने की इच्छा है। यह बड़ा ही लोभी है। अगर मैं इस पर कृपा करके मंत्र सिखला भी दूं तो भी ज़्यादा दिन वह मंत्र उसके लिए काम न देगा"

सुनंद के व्यवहार पर बोधिसत्व की पत्नी बड़ी खुश हुई और उस पर उसे दया भी आई। उसने एक दिन अपने पति से कहा–"यह लड़का हमारे घर के सारे काम-काज करता है और हमारे बेटे से भी ज्यादा विनयशील बना रहता है। मंत्र उसके लिए काम क्यों न देगा? अगर काम नहीं देगा, तो इसका दोष उसी का होगा। इसलिए आप इसको मंत्र का जरूर उपदेश दीजिए।"

बोधिसत्व थोड़ी देर सोचते रहें, अपनी पत्नी की बातों का संकेत समझ गये और सुनंद को मंत्रोपदेश करने को मान लिया।

दूसरे दिन बोधिसत्व ने सुनंद को बुलाकर कहा–"बेटा, यह एक अपूर्व मंत्र है, अगर तुम इस मंत्र का उपयोग न्याय पूर्वक करोगे तो तुम्हें धन और यश दोनों मिल जायेंगे। लेकिन एक बात याद रखो। अगर कोई तुम से यह पूछे कि तुमने यह मंत्र किसके यहाँ सीख लिया है, तब तुम इसका रहस्य प्रकट न करो, तुमने यदि मंत्र का रहस्य प्रकट किया तो उसी क्षण से मंत्र की महिमा जाती रहेगी।" यों समझाकर बोधिसत्व ने सुनंद को मंत्रोपदेश दिया।

सुनंद मंत्र सीखकर घर पहुँचा, आम की सृष्टि करके उन्हें बेचकर धन कमाने लगा।

इस तरह सुनंद ने बेमौसम के जो आम पैदा किये, उनमें से एक फल काशी राजा के हाथ लगा। वे आश्चर्य में आ गये, उनकी सृष्टि करने वाले का पता लगाकर सुनंद को अपने यहाँ बुला भेजा।

राजा ने सुनंद से पूछा–"तुम बेमौसम में इन आमों की सृष्टि कैसे करते हो? यह देवताओं की सृष्टि है, न मानव की? तुम सच-सच बतला दो।"

सुनंद ने प्रसन्न होकर राजा से निवेदन किया–"महाराज, मैं जो आम बेचता हूँ, इनकी सृष्टि मैं खुद करता हूँ। मैं एक महा मंत्र जानता हूँ। उस मंत्र की महिमा के द्वारा ही मैं बेमौसम में आम के पेड़ों में फल उगवा देता हूँ।"

यह उत्तर पाकर राजा और आश्चर्य में आ गये और बोले–"ओह, ऐसी बात है। मेरे मन में उस मंत्र की महिमा को स्वयं देखने की इच्छा है। लेकिन यह बताओ कि तुम मेरे उद्यान वन के पेड़ों में अपने मंत्र की महिमा से आम पैदा कर सकते हो?"

सुनंद ने खुशी के साथ मान लिया। दूसरे दिन राजा अपने परिवार को साथ लेकर उद्यान वन में पहुँचे। सुनंद वहाँ पर एक पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़ा हो गया। मंत्र-पठन करके कमण्डलु से जल लेकर आम की डालों पर छिड़क दिया। तुरंत सैकड़ों की संख्या में आम के फल नीचे गिर गये।

इस अद्भुत को देख राजा और उनका परिवार विस्मय में आ गया। सबने फल चखकर देखा। उसका स्वाद अनोखा था। इस पर राजा ने सुनंद की बड़ी प्रशंसा की और उसका सत्कार भी किया।

इसके बाद राजा ने सुनंद से पूछा–"ऐसी महिमा वाले मंत्र का उपदेश करने वाले महा ज्ञानी कौन हैं ?"

सुनंद की समझ में न आया कि क्या जवाब दे ? उस वक़्त उसे अपने गुरुजी की बातें याद आयीं कि मंत्र का रहस्य बताने पर मंत्र की शक्ति जाती रहेगी। फिर भी उसने सोचा कि जिस मंत्र को कंठस्थ कर लिया है, उसकी शक्ति कैसे जायेगी! ये सब गुरुजी की आडंबर पूर्ण बातें हैं। यों सोचकर उसने राजा को सच्ची बात बताई कि उसने यह मंत्र कहाँ और कैसे सीख लिया है।

इस पर राजा सुनंद का मजाक़ उड़ाते हुए बोले–"ओह, ऐसी बड़ी महिमा वाले मंत्र को तुमने एक चर्मकार के यहाँ से सीख लिया है ? ब्राह्मण के वंश में जन्म लेकर तुम इहलोक के सुख-भोगों के लोभ में पड़कर अपने स्वधर्म को भूल गये हो ? यह बड़ा ही नीचता पूर्ण कार्य है।"

राजा के मुँह से ये बातें सुन सुनंद लज्जित हो सर झुकाये चुपचाप अपने घर लौट गया।

थोड़ा समय गुजर गया। एक दिन काशी राजा के मन में आम खाने की इच्छा जगी। उन्होंने सुनंद को बुला कर अपनी इच्छा बताई। इस पर सब लोग उद्यान वन में पहुँचे।

सुनंद पहले की भांति आम के पेड़ से सात फुट की दूरी पर खड़े हो मंत्र-पाठ करने को हुआ, लेकिन बड़ी देर तक याद करने पर भी मंत्र याद न आया। तब जाकर सुनंद ने समझ लिया कि गुरुजी के आदेश का अतिक्रमण करने की वजह से मंत्र की महिमा जाती रही है।

राजा चकित हो पेड़ की ओर देखते रहें, तब सुनंद ने उन्हें बताया–"महाराज, मैंने अपने गुरुजी के आदेश का उल्लंघन किया है! इसीलिए मैं मंत्र की महिमा खो बैठा हूँ।" यों कहकर चितापूर्ण चेहरा लिए सुनंद अपने घर लौट गया।

भर्तृहरि की कहानी

ई. सन. सातवीं शती में भर्तृहरि नामक राजा उज्जैन को अपनी राजधानी बना कर राज्य करते थे। वैसे वे विलास पूर्ण जीवन बिताते थे। फिर भी शासन के कार्यों में वे दया तथा धर्म का पालन करते थे।

नगर के समीप के जंगल में उन दिनों में एक मुनि निवास करता था। एक दिन एक विचित्र फल उसकी आँखों के सामने तिरते दिखाई दिया। थोड़ी देर सोचने के बाद मुनि ने समझ लिया कि उस की ध्यान शक्ति का परिणाम ही वह फल है।

वह विचित्र फल अद्भुत शक्तियों वाला था। उसे खाने वाला व्यक्ति सौ वर्ष तक यौवन बनाये रखेगा। मुनि ने सोचा कि राजा भर्तृहरि उस फल को खाने योग्य हैं। यों सोच कर मुनि ने वह फल राजा भर्तृहरि को भेंट किया।

राजा भर्तृहरि अपनी छोटी रानी को अपने प्राणों से ज्यादा प्यार करते थे। वे उसी वक्त अपनी छोटी रानी के अंत:पुर में पहुँचे और वह फल उनको भेंट में दिया।

इसके बाद दूसरे दिन वे शिकार खेलने जंगल में चले गये। शिकार से लौटते वक्त एक नक़ाबधारिणी नारी उन्हें दिखाई दी और राजा को अपने साथ एक निर्जन वन में ले गई।

राजा ने शीघ्र ही समझ लिया कि वह युवती एक अपूर्व सौंदर्य वाली नर्तकी है। उसने वह फल राजा के हाथ सौंप कर कहा–"राजन, यह फल अपनी अदभुत शक्ति के द्वारा सौ वर्ष तक आपको यौवन-संपन्न बनाये रखेगा। इसे खाने की योग्यता मैं नहीं रखती हूँ। आप ही इसे खाने योग्य है। "यों कहकर वह जल्दी वहाँ से चली गई।

राजा ने मुनि के पास जाकर पूछा कि कहीं उन्होंने अदभुत शक्तिवाला फल किसी नर्तकी को दिया है? मुनि ने राजा को स्पष्ट बताया कि ऐसा फल सिर्फ एक ही है, दूसरा नहीं है।

इस पर राजा भर्तृहरि के आश्चर्य की कोइ सीमा न रही। वे वहीं पर एक पहाड़ी शिला पर बैठकर सोचने लगे कि वह विचित्र फल नर्तकी को कैसे प्राप्त हुआ? और इस फल के पीछे कौन-सा रहस्य छिपा हुआ है?

इसके बाद राजा ने राजधानी में पहुँच कर दर्याफ़्त शुरू किया; तब राजा को मालूम हुआ कि छोटी रानी एक अधिकारी पर जान देती थी। इसलिए उसने अपने पति से वह फल लेकर अपने प्रियतम को दे दिया है।

लेकिन उस अधिकारी ने वह फल नहीं खाया। उसने उसी दिन शाम को वह फल एक नर्तकी को भेंट किया। क्योंकि वह अधिकारी उस नर्तकी को अपनी जान से ज़्यादा प्यार करता था।

इस रहस्य का पता चलने पर राजा भर्तृहरि ने ऐसा अनुभव किया, मानो उसके सर पर वज्रपात हुआ हो। इसपर वे कई दिन चिंता में डूबे रहे। इसके बाद एक दिन रात को राजा भर्तृहरि अपने सिंहासन तथा सुंदर राजधानी नगर को त्याग कर जंगल मे पहुँचे और एक मुनि के जैसे तपस्या करते अपना शेष जीवन बिताया।

संन्यास लेने के बाद भर्तृहरि ने कई ग्रंथ लिखे। उनमें से 'वैराग्य शतक' एक है, जिसमे सौ पद्य है। मानव जीवन में उत्पन्न होने वाले प्रलोभन, आडंबर, आकर्षण आदि का परिचय दे, उनके प्रति भ्रम को दूर करने में वह ग्रंथ बड़ा सहायकारी है।

आलसीपन का नतीजा

राधाबाई के दो बेटे थे। बड़ा बेटा मंगाराम बड़ी मेहनती था, पर छोटा बेटा दयाराम एक दम आलसी था। मंगाराम दूसरों के खेतों में भी मजदूरी करके थोड़ा-बहुत कमा लेता था, जब कि दयाराम हमेशा मटरगश्ती किया करता था।

राधाबाई ने दयाराम को कई तरह से समझाया कि वह अपने आलसीपन को छोड़ दे, लेकिन जब कोई फायदा न रहा, तब वह खीझ उठी। उसने यह सोचकर दोनों भाइयों को अलग रखा कि जिम्मेदारी सिर पर आने से दयाराम आलसीपन को छोड़ कोई न कोई रास्ता ढूंढ़ लेगा।

बड़े भाई से अलग होने पर दयाराम का दिल बैठ गया। सारा दिन वह गाँव में चक्कर काटता रहा, शाम के होते ही गाँव के बाहर एक उजड़े मंदिर में पहुँचा और एक चबूतरे पर लेट गया।

आधी रात के वक़्त कोई आहट हुई जिससे दयाराम की आँखें खुल गईं। उसके सामने एक देवी दिखाई दी। उसने पूछा—"बेटा, तुम कौन हो? यहाँ पर क्यों आये हो?"

दयाराम ने देवी को प्रणाम करके कहा—"माताजी, मेरा नाम दयाराम है! मैं जीविका की खोज कर रहा हूँ!"

देवी को दयाराम पर दया आ गई। उन्होंने पूछा—"बताओ, तुम कैसा काम कर सकते हो? तुम्हें मैं ऐसा वर दूंगी जिससे उस काम के द्वारा तुम्हारा बड़ा फ़ायदा हो जाय!"

"माताजी, मैं सिर्फ़ खेती करना जानता हूँ।" दयाराम ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है। मैं देखूंगी कि इसमें तुम्हारा फ़ायदा हो जाय।" यों कहकर देवी अदृश्य हो गई।

कमला पाठक

एक हफ़्ता बीतने के पहले ही राजा के यहाँ से गाँव के अधिकारियों को आदेश मिला कि भूमिहीन मंगाराम तथा दयाराम को समीप के जंगल में दो-दो एकड़ जमीन दे। इस पर गाँव के अधिकारी ने दोनों भाइयों को दो-दो एकड़ जमीन दे दी।

दयाराम के हिस्से में जो जमीन मिली थी, उसमें घास-दूब और कंटीली झाड़ियाँ ज़्यादा थीं। पर मंगाराम की जमीन समतल और साफ़ थी। अगर दयाराम को अपनी जमीन उपजाऊ बनानी है तो पहले उसे झाड-झंखाड़ों को काटकर साफ़ बनाना होगा। इस वजह से आलसी दयाराम अपने बड़े भाई के पास जाकर बोला— "भैया, मैं तुम जैसे मेहनत नहीं कर सकता। तुम्हें जो जमीन मिली है, उसमें झाड़-झंखाड़ कम हैं। क्या हम आपस में अपनी अपनी जमीनें बदल ले ?"

मंगाराम ने अपने छोटे भाई पर रहम खाकर अपनी ज़मीन उसे दे दी और छोटे भाई की जमीन उसने ले ली।

दयाराम अपनी जमीन के एकाध पेड़ काट भी न पाया था, इस बीच मंगाराम ने मेहनत उठाकर अपनी जमीन को एक दम साफ़ और समतल बना दिया। उस वक़्त एक सूखे पेड़ के खोखले में से मंगाराम को सोने के दो टुकड़े हाथ लगे।

यह समाचार मिलते ही दयाराम अपना सर पीटने लगा। उसे देवी की बातें याद हो आईं। वह तुरंत दौड़कर अपने बड़े

भाई के पास पहुँचा, सारी कहानी सुनाकर सोना माँगा। लेकिन पूरा सोना क्या, आधा सोना भी दयाराम को देने से मंगाराम ने साफ़ इनकार किया।

इस घटना के चार दिन बाद फिर दयाराम मंगाराम के पास पहुँचा और गिड़-गिड़ाकर पूछा–"भैया, तुमने अपनी जमीन समतल बनाकर बुआई के लिए तैयार की है। मुझे फिर एक मौक़ा तो दे दो। हम जमीनें बदलकर अपनी अपनी वापस ले लेंगे।"

अपने छोटे भाई के प्रति प्रेम रखनेवाले मंगाराम का दिल पिघल उठा। उसने जमीनें बदलने को मान लिया।

मंगाराम ने उस जमीन के झाड़-झंखाड़ काटकर साफ़ किया और जब उसे जोतने लगा तब हल के फाल से कोई चीज टकराकर खन् खन् की आवाज हुई। उसने वहाँ पर खोदकर देखा, जमीन में गढ़ी गई सोने के सिक्कों से भरी अशर्फियाँ उसके हाथ लगीं।

यह खबर मिलते ही दयाराम की यह हालत हुई कि मानो वह बेहोश होता जा रहा हो। वह अपनी बदक़िस्मती को कोसते अपने बड़े भाई के पास पहुँचा और सोने की अशर्फियों में से अपना हिस्सा मांगा, लेकिन मंगाराम ने हिस्सा देने से इनकार किया।

इस पर दयाराम का दिल बेचैन हो उठा। वह दिन भर चिंता के मारे सारा गाँव चक्कर लगाता रहा और रात को

जाकर उजड़े हुए मंदिर में लेट गया। आधी रात के वक़्त फिर देवी ने प्रत्यक्ष होकर दयाराम को डांटते हुए कहा–"अरे मूर्ख आलसी! तुमको सुधारने के ख्याल से मैंने तुम्हें दो-तीन मौक़े दिये, पर तुमने अपने आलसीपन की वजह से उन मौक़ों को लात मार दी। राजा के मन में दया भाव पैदा कर मैंने तुम्हें जमीन दिलाई। पेड़ के खोखले में मैंने तुम्हारे वास्ते सोने के टुकड़े रख दिये। इसके बाद तुमने जो जमीन बदल ली, उसमें सोने की अशर्फियों से भरी हंडियाँ छिपाकर रख दीं। वे सब तुम्हारे भाई के हाथ लगे। जब तक तुम्हारा आलसीपन दूर न होगा, तब तक कोई भी तुम्हारा सुधार नहीं कर सकता। आइंदा तुम फिर कभी अपना चेहरा मुझे मत दिखाओ।" यों डांटकर देवी अदृश्य हो गई।

देवी की डांट-फटकार सुनने पर दयाराम को अपने ऊपर घृणा पैदा हो गई। उस दिन से वह मेहनत करके अपने खेत में अपने भाई के बराबर फ़सल पैदा करने लगा। दयाराम में यह परिवर्तन देख सारे गाँववाले उसकी तारीफ़ करने लगे।

खेत से जब फ़सल घर आई, तब मंगाराम अपने छोटे भाई के घर आकर दयाराम को अपने घर ले गया और समझाया–"मेरे छोटे भैया, तुम इस बात के लिए मुझ पर नाराज मत होओ कि मुझे जो सोने के टुकड़े व अशर्फियों की हंडियाँ मिली हैं, उनमें से तुमको मैंने हिस्सा नहीं दिया है। तुम्हारे आलसीपन को दूर करने के लिए ही माँ और मैंने आपस में बात करके हम से तुमको अलग रखा है। अब तुम्हारा आलसीपन दूर हो गया है। तुमको मेरी सारी संपत्ति में आधा हिस्सा देता हूँ। लेकिन आज से हम दोनों फिर एक साथ मिलकर रहेंगे। माँ भी बड़ी खुश हो जाएगी।"

ये बातें सुन दयाराम खुशी के मारे उछल पड़ा और अपने भाई के साथ मिलकर रहने को उसने मान लिया।

नैतिक शिक्षा

विदर्भ के राजा धर्मनंदन ने अपने राज्य की पाठशालाओं में बच्चों को नैतिक शिक्षा देने के लिए कुछ अध्यापकों को नियुक्त करना चाहा। मगर इसके योग्य अध्यापकों का चुनाव करने में बड़ी कठिनाई महसूस हुई, इस पर मंत्री विद्याधर ने इस समस्या को आसानी से हल करने का सुझाव दिया।

इसके बाद मंत्री ने राज दरबार में काम करने वाले कुछ अधिकारियों की सभा बुलाई, उन्हें राजा का निर्णय सुनाकर बताया–"इस काम के वास्ते पाठशालाओं के लिए हम कुछ भवनों का निर्माण कराना चाहते हैं, इस काम के समाप्त होते ही आप लोगों को इसकी सूचना देंगे। इस बीच आप लोग अगले महीने की पहली तारीख से कोशाध्यक्ष के यहाँ से अतिरिक्त वेतन लेते जाइये।"

इसके बाद दो-तीन महीने बीत गये, मगर भवनों का निर्माण पूरा न हुआ। इस बीच शिक्षकों के पद पर नियुक्त कुछ लोग आकर अपने वेतन ले गये। जिन लोगों ने वेतन नहीं लिये, उन्हें बुलवाकर मंत्री ने इसका कारण पूछा। उन लोगों ने जवाब दिया–"महानुभाव, हमने आज तक पाठशाला में एक दिन भी बच्चों को नहीं पढ़ाया है, ऐसी हालत में वेतन लेना कहाँ तक न्याय संगत होगा?"

इस पर मंत्री ने राजा को उन लोगों के विचार सुनाकर बताया कि सचमुच नैतिक शिक्षा के योग्य गुरु ये ही लोग हैं। राजा ने उन लोगों को शिक्षक के रूप में नियुक्त किया।

अनसूया अपने पति के मरने पर कुछ ईमानदार काश्तकारों के द्वारा खेती कराते हुए अपने दो बच्चों का पालन-पोषण बड़ी सावधानी से करने लगी। जब उसके दोनों लड़के पढ़-लिख कर जवान बन गये, तब अनसूया ने अच्छे रिश्ते देख उनका विवाह भी किया।

अनसूया की दोनों बहुएँ अपने मायके से क़ीमती वस्त्र और गहनों के साथ रसोई का बहुत सारा सामान भी लेती आईं।

अनसूया के यहाँ जमीन-जायदाद काफी मात्रा में थी, इस वजह से काश्तकारों के द्वारा खेती का काम और बैल-भैंसों की देख भाल करने के बावजूद भी बाकी ऐसे बहुत से काम बचे रहते थे जिनकी वजह से सास और बहुओं को दम लेने की फ़ुरसत नहीं मिलती थी।

अनसूया खुद बड़ी तंदुरुस्त थी। अपने बेटों की शादी के पहले काश्तकारों की देखरेख के साथ घर के सारे काम-काज वही संभाल लेती थी। लेकिन दो बहुओं के आने के बाद भी उसे घर के बहुत सारे काम करने पड़ते थे, यही उसकी परेशानी का कारण था।

इसलिए अनसूया ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि आइंदा वह आराम से एक जगह बैठकर वहीं पर खाना मंगवा कर सुख भोग ले। लेकिन उसके मन में यह संदेह पैदा हुआ कि किसी तरह की बीमारी के बिना बैठे-बैठे सुख भोगना उसकी बहुएँ पसंद न करेंगी।

इस पर खूब सोच-विचारकर अनसूया ने एक योजना बनाई। अचानक एक दिन उसने हो-हल्ला मचाकर बताया कि उसे आँखें दिखाई नहीं देती और कान भी सुनते नहीं।

मालती शर्मा

अनसूया के बेटे अपनी माँ की यह हालत देख एकदम घबड़ा गये। दोनों ब्रेटों ने सोचा कि उसकी माँ को पूर्ण रूप से आराम करना चाहिए, इस ख्याल से उसके वास्ते एक अलग कमरे का इंतजाम किया और उसे साफ़ बता दिया कि उसे कभी भी चारपाई से उतरना नहीं चाहिए।

अपनी चाल के चलते देख अनसूया बहुत खुश हुई। वक़्त पर बहुएँ खाना लाकर उसे खिलातीं, वह आराम से अपने दिन काटने लगी। मगर अनसूया की बहुएँ बड़ी होशियार थीं, वे कुछ ही दिनों में भांप गई कि उसकी सास वास्तव में तंदुरुस्त है, पर वह यह स्वांग रच रही है। वैसे वे अपनी सास का बड़ा आदर करती थीं, मगर उसके इस काम से वे बहुत असंतुष्ट हो गईं।

एक दिन जब दोनों बहुओं के पति खेत पर चले गये, तब दोनों ने मिठाइयाँ बनाईं और अपनी सास के सामने बैठ कर गपशप करते खाने लगीं।

"सास की आँखें दीखती नहीं, उनके कान सुनते नहीं; यह तो हमारे लिए बड़ी क़िस्मत की बात है। अगर हम उन पर नाराज़ होती हैं तो उन्हें गालियाँ भी दें तो वह सुन नहीं पायेंगी। हाँ, आज तो हमने लड्डू बनवाये, कल दूध पेड़ा बनाकर मजे से खा लेंगीं।" यों कहते वे अपनी सास को उकसाने लगीं।

लेकिन सास अपने क्रोध को प्रकट किये बिना मन ही मन सोचने लगी– 'मेरी क़िस्मत में कैसी घमण्डी बहुएँ लिखी गई थीं। वे मिठाइयाँ भले ही मुझे न खिलावे, मगर अपने पतियों तक खिलाये बिना घूसों की तरह मजे से बैठ कर उड़ा रही हैं!' यों सोचकर उसके मुंह में लार टपकते रहने पर भी अपने ऊपर नियंत्रण रखने लगी।

आखिर अनसूया ने निश्चय कर लिया कि उसकी चाल चली नहीं, एक दिन अपने बेटों को घर में पाकर वह जोर से चिल्ला उठी–"बेटे, मेरी कैसी खुश क़िस्मती है! मेरी दृष्टि लौट आई है!"

यह खबर सुनकर अनसूया के दोनों बेटे बड़े खुश हुए और अपनी माँ के पास पहुँचकर पूछा–"माँ, सचमुच तुम्हें दृष्टि आ गई है?"

"सच है, बेटा! उफ़, क्या बताऊँ, मेरे कान भी सुनाई दे रहे हैं!" यों कहते अनसूया इस बार और जोर से चिल्ला उठी।

इतने में दोनों बहुएँ अनसूया के पास पहुँचकर बोलीं–"ओह! हम कैसी क़िस्मत-वर हैं! बड़ी सहनशीलता के साथ घर के सारे काम संभालने वाली तंदुरुस्त सास के लिए अचानक दृष्टिदोष होना और कानों के न सुनाई देना हमारे लिए कैसी पीड़ादायक थी!" यों कहकर बहुओं ने अनुसूया के हाथ पकड़कर समझाया– "माँजी, अब आप इस कमरे और चारपाई को छोड़ दीजिए! जल्दी बरामदे में आकर चावल में से कंकड़ चुनिये, उधर चूल्हे पर पानी खौल रहा है।"

अनसूया चुपचाप बरामदे में आ गई। उस वक़्त उसके मन में इस बात का संतोष था कि उसे खिलाये बिना मिठाइयाँ बनाकर खाने वाली बहुओं का खेल उसने बंद किया है।

पर बहुएँ यह सोचकर संतुष्ट थीं कि काम करने की ताक़त के रखते स्वांग रचने वाली सास को उन दोनों ने अच्छा सबक़ सिखलाया है।

कंजूस का पाप

कंजूस जगतराम अत्याचार व पाप करने में संकोच नहीं करता था। उसने सुना था कि कि काशी जाकर गंगा में डुबकी लगाने पर पाप मिट जायेंगे। लेकिन काशी में जाकर गंगा में नहाकर लौटने में काफी रुपये ख़र्च होंगे। इस बीच जगतराम को मालूम हुआ कि माधवप्रसाद काशी जानेवाला है। इस पर उसने माधव से कहा–"माधव, मैंने सुना है कि तुम काशी जाने वाले हो। काशी हो आने में कम से कम दो सौ ख़र्च होंगे। आख़िर तुम जा ही रहे हो, इसलिए तुम ऐसा समझो कि तुमने मेरे सारे पाप अपने सर पर लिये हैं और अपने पापों के साथ तुम मेरे भी पापों को धो डालो, मैं तुम्हें सौ रुपये दूंगा।"

"अच्छी बात है, लाओ सौ रुपये!" यों कहकर माधव ने जगतराम से सौ रुपये ले लिये।

एक दिन जगतराम ने माधव से पूछा–"माधव, तुम काशी कब जा रहे हो?"

माधव ने झट जवाब दिया–"मैं काशी नहीं जा रहा हूं। हमारे गाँव के तालाब में डुबकियाँ लगाकर उसीको मैंने गंगा-स्नान समझ लिया है।"

तपस्या का फल

प्राचीन काल में राज्यवर्द्धन नामक एक राजा रहा करते थे। जनता उन पर जान देती थी। राजा अपनी प्रजा को अपनी संतान के बराबर मानते थे।

एक दिन रानी ने राजा को सिरस्नान कराते हुए अपनी आँखों में आँसू भर लिये। इसे देख राजा ने इसका कारण पूछा। रानी ने कहा–"महाराज, मैं इसका जवाब क्या दूं? आपके बाल सफ़ेद होते जा रहे हैं! आपके भीतर बुढ़ापे को देख मेरा दुख उमड़ पड़ा।" यों कहते रानी ने अपने आँसू पोंछ लिये।

इस पर राजा बोले–"बस, इसी बात के लिए तुम दुखी हो रही हो? बुढ़ापा तो सबको आता है! उसके साथ मौत भी उसका पीछा करती रहती है! यह बात तो हर आदमी के लिए स्वाभाविक है! इससे कोई बच नहीं सकता। आज नहीं तो कल हम सब मरनेवाले हैं! इस वास्ते दुखी होना बेकार है।" राजा ने यों रानी को समझाया।

लेकिन रानी का दुख कम न हुआ। वह सभी देवताओं से प्रार्थना करने लगी कि उसके पति की आयु बढ़ावे। अपनी पत्नी को दुखी देख राज्यवर्द्धन चिंता में पड़ गये। धीरे-धीरे राजा राज-काज को छोड़ चिंता में घुलने लगे।

उस हालत में मंत्री सोचने लगे कि इसका क्या उपाय किया जाय? उसने सोचा कि बुढ़ापे के साथ मानसिक स्वास्थ्य को भी खोने वाले राजा का शासन के क़ार्यों से हट जाना ही राज्य के लिए सब तरह से हितकर है। राज्य का भार संभालने के लिए राज्यवर्द्धन के बड़े पुत्र थे ही। मंत्री ने यह बात राजा को साफ़-साफ़ बता दी।

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

राजा राज्यवर्द्धन ने सोचा कि अपने ज्येष्ट पुत्र का राज्याभिषेक करके तपस्या करने के लिए जंगल में चला जावे। दूसरे ही दिन राजा ने पुरोहित को बुला कर मुहुर्त रखने को कहा। लेकिन जनता चुप न रही, महाराजा के पास जाकर बोली :

"महाराज, आप आज तक हमको अपनी संतान की तरह मान रहे थे, पर आज हमको छोड़कर जा रहे हैं। यह खबर सुनते ही हमें बड़ा दुख हो रहा है। कृपया आप यही रह जाइये। हमारी बात नहीं मानेंगे तो हम भी आपके साथ चलेंगे!"

इसके जवाब में राजा बोले–"हर एक मनुष्य के लिए जन्म के साथ मौत भी लगी रहनी है! मैं भले ही जंगल में न जाऊँ, फिर भी मौत मेरा पीछा करती रहती है। इसलिए इस बुढ़ापे में ही सही मैं तपस्या करते हुए अपना समय बिताऊँगा। तुम लोग डरो मत, तुम लोगों के वास्ते एक और राजा को नियुक्त करके ही जा रहा हूँ।"

फ़िर भी जनता चुप न रही, उनमें से कुछ प्रमुख व्यक्ति पुण्य तीर्थों में जाकर अपने राजा की आयु की वृद्धि के लिए तपस्या करने लगे। इस तरह उन लोगों ने कई महीने तक अपने राजा के वास्ते तपस्या की। तब उन्हें एक गंधर्व ने दर्शन देकर समझाया–"तुम लोग कामरूप पर्वत पर जाकर अपने राजा की आयु की वृद्धि के लिए सूर्य भगवान के प्रति तपस्या करो। वे ही तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करेंगे।" यों कहकर वे अदृश्य हो गये।
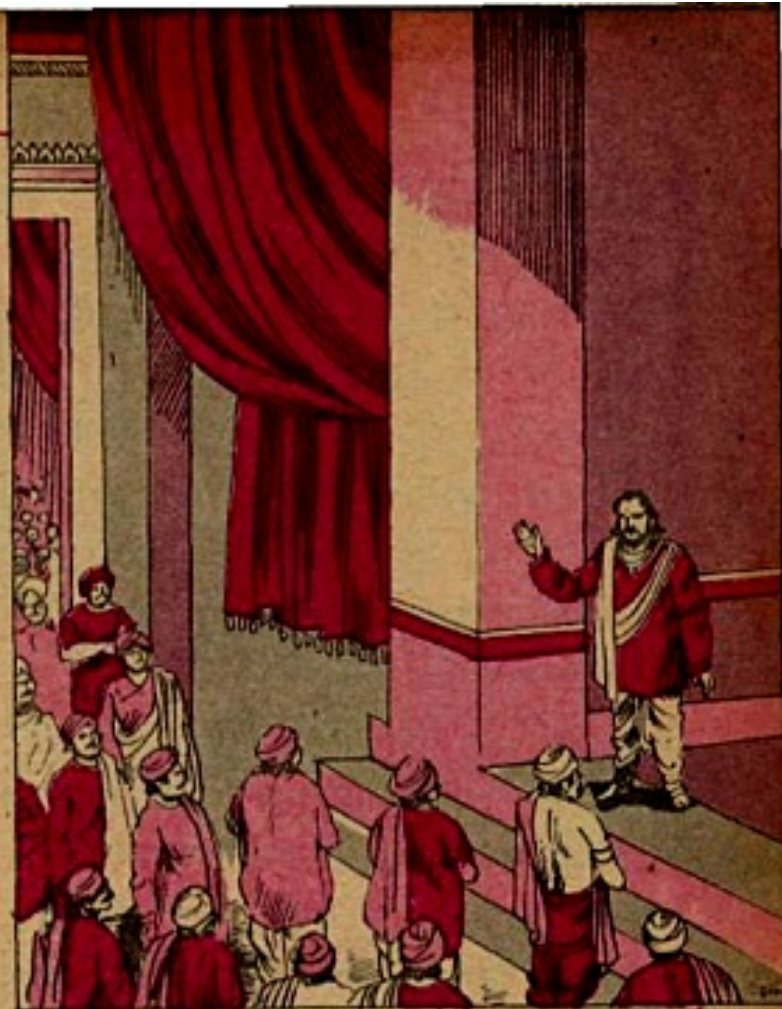
इस पर वे बहुत खुश हुए और काम रूप पर्वत पर जाकर भयंकर तपस्या करने लगे। कई दिन बाद सूर्य भगवान ने प्रत्यक्ष होकर बताया–"तुम लोगों की इच्छा के अनुसार राज्यवर्द्धन एक हजार वर्षों तक और जीयेंगे।"

जनता यह सोचकर खुश हुई कि उनकी तपस्या सफल हो गई, राजा से उन लोगों ने यह बात बड़ी खुशी से कही, लेकिन राजा खुश न हुए। इसे देख रानी बोली–"महाराज, जनता आपके प्रति श्रद्धा और भक्ति रखती है, इसीलिए सूर्य भगवान के प्रति तपस्या करके यह वरदान प्राप्त कर लाई है, अब आप चिंतित क्यों हैं?"

राजा ने कहा–"तुम्हारा कहना सही है, मेरी प्रजा मेरे वास्ते बड़ी तक़लीफ़ उठाकर यह वरदान प्राप्त कर लाई है। अच्छी बात है, मैं एक हज़ार वर्ष तक जीवित रहूँगा, लेकिन मेरे प्रति अपार विश्वास रखने वाली मेरी प्रजा तब तक जीवित नहीं रह सकती। मेरे साथ अगर मेरी प्रजा एक हज़ार वर्षों तक जीवित न रहेगी तो मुझे संतोष कैसे प्राप्त होगा? इसलिए मैं भी तपस्या करके मेरी प्रजा के वास्ते जब तक मैं ज़िंदा रहूँगा, तब तक उनकी आयु भी बढ़ाने का वरदान पाकर लौटूंगा।" यों समझाकर राजा कामरूप पर्वत पर चले गये और तपस्या शुरू की।

एक-दो साल बीत गये। राज-काज ठप्प पड़ गये, फिर भी जनता सच्चे रास्ते पर चलने वाली थी, इस कारण देश में कोई अराजकता न फैली। जनता यह सोचकर रोज कामरूप पर्वत के पास जाकर राजा के दर्शन करने लगी कि कब हमारे राजा की तपस्या सफल होगी।

आखिर सूर्य भगवान ने राज्यवर्द्धन की तपस्या पर प्रसन्न होकर दर्शन देकर कहा–"राजन, मैं तुम्हारी सद्बुद्धि की तारीफ़ करता हूं। तुम्हारी तपस्या सफल हो गई है। तुम्हारी इच्छा के अनुसार जब तक तुम ज़िंदा रहोगे तब तक तुम्हारी प्रजा भी जीवित रहेगी।" यों वरदान देकर अदृश्य हो गये।

सूर्य भगवान के अनुग्रह से राज्यवर्द्धन और उनकी प्रजा भी एक हज़ार वर्ष तक ज़िंदा रहे और सभी सुखों का अनुभव किया।

विघ्नेश्वर

एक बार लक्ष्मी मान सरोवर में स्नान कर रही थी, तब पार्वती विष्णु का वेष धरकर उनके समीप पहुँचीं। अत्यंत मनोहर लगने वाले नारायण की ओर लक्ष्मी देवी ने अपनी दृष्टि दौड़ाई। नारायण के वेष में स्थित पार्वतीजी को लक्ष्मी का सौंदर्य अत्यंत मनोमुग्धकारी मालूम हुआ। दोनों ने एक दूसरे की ओर प्रेमपूर्ण दृष्टि दौड़ाई। उन दृष्टियों के मिलन से सरोवर में एक स्वर्ण कमल उग आया। उसमें चकाचौंध करने वाली एक बालिका प्रत्यक्ष हुई। लक्ष्मी ने नारायण के समीप जाकर उनके साथ गाढ़ालिंगन किया। इस पर पार्वतीजी खिल-खिला कर हँसते हुए बोलीं—"मैं नारायण नहीं हूँ, बल्कि पार्वती हूँ।" यों कहते पार्वतीजी अपने निज रूप में प्रत्यक्ष हुईं।

लक्ष्मी ने परिहास पूर्वक कहा—"तुम भी अपने भाई के योग्य बहन कहलाई हो, पार्वती।"

पार्वती ने कहा—"एक बार विष्णु ने मोहिनी का रूप धरकर शिवजी को माया में डाल दिया था। उसका बदला मैंने यों ले लिया है। समझीं।"

इसके बाद स्वर्ण कमल के बीच एक सुंदर बालिका को देख लक्ष्मी और पार्वती आनंद विभोर हो गईं। अपार वात्सल्य से प्रेरित होकर दोनों ने उस शिशु को अपने हाथों में ले लिया। उस समय विघ्नेश्वर ने प्रवेश करके बताया—

"माताओ, आप दोनों के अंश से अवतरित यह शिशु पार्वतीजी की तरफ़ से जया तथा लक्ष्मी की तरफ़ से श्री मिलकर 'जयश्री' के नाम से प्रसिद्ध होगी। इसका पति भी शिव और केशव के अंशों के द्वारा अवतरित हुआ है।" यों समझाकर वायुदेव को आदेश दिया कि उस बालिका वाले स्वर्ण कमल को कावेरी नदी में बहाकर लौट आवे। वायुदेव ने जयश्री को कावेरी नदी में पहुँचा दिया।

इसके बाद दक्षिणी प्रदेश पर शासन करने वाले चक्रवर्ती बालिका को अपने महल में ले जाकर नामकरण का उत्सव मनाने लगे, तब आकाशवाणी यों सुनाई दी–"इस बालिका को 'जयश्री' के नाम से पुकारो।"

जयश्री एक राजकुमारी के रूप में पली व बढ़ी, और तीनों लोकों में अत्यंत रूपवती और साहसी कहलाई।

जयश्री को राजमहल की अपेक्षा प्राकृतिक सौंदर्य से पूर्ण जंगलों में विहार करना कहीं अच्छा लगता था।

हरि तथा हर के अंशों से अवतरित स्वामी एक दिन विघ्नेश्वर और कुमार स्वामी से मिलने कैलास में गये। उस वक़्त विघ्नेश्वर तथा कुमारस्वामी प्रसन्नता पूर्वक वार्तालाप करते–"मान सरोवर में लक्ष्मी तथा पार्वती के तेज को लेकर स्वामी के होने वाली पत्नी का उदय हो गया है!" ये शब्द कहकर मौन रह गये।

स्वामी के मन में कौतूहल पैदा हुआ, फिर भी वे अपने मन पर नियंत्रण करके थोड़े दिन वहीं रहे, लेकिन जब वे वहाँ से लौटने लगे, तब विघ्नेश्वर ने कहा– "स्वामी, आप हम दोनों भाइयों से उम्र में बड़े हैं, फिर भी आपका ब्रह्मचारी बने रहना हमको अच्छा नहीं लगता। शीघ्र ही आप को विवाह करना पड़ेगा!"

इसके बाद कुमारस्वामी तथा विघ्नेश्वर ने आदर पूर्वक स्वामी को विदा किया। स्वामी अपने निवास को लौट आये।

एक दिन स्वामी शेर पर सवार हो विनोद पूर्वक जंगल में विहार कर रहे थे, तब कहीं से सर्र से बाण आ पहुँचे और स्वामी को रोकते चारों तरफ़ जमीन में धंस गये। स्वामी ने बाणों के आने की दिशा में क्रोध से देखा, पर दूसरे ही क्षण उनका क्रोध एकदम गायब हो गया। धनुष-बाण हाथ में लिये ठाठ से मुस्कुराने वाली जयश्री उन्हें दिखाई दी। उनकी दृष्टि स्वामी के हृदय में बस गई। पर स्वामी अंतर्धान हो गये।

विघ्नेश्वर ने स्वामी के बारे में जयश्री को स्वप्न में दर्शन देकर पहले ही बता दिया था। वह स्वामी की खोज में वन में विहार कर रही थी।

इसके बाद नारद मुनि के आदेशानुसार चक्रवर्ती ने जयश्री के स्वयंवर का प्रबंध किया। राजाओं के रूप में इन्द्र आदि देवता बेष बदलकर उस स्वयंवर में पहुँचे। पर स्वामी एक साधारण शबर युवक के रूप में तीर-कमान धारणकर काल रंग के एक कुत्ते को साथ ले वहाँ पर आये।

राजाओं ने शबर युवक तथा उनके पालतू कुत्ते का मजाक़ उड़ाया। राजाओं के बीच उन्हें उचित आसन देकर बैठने नहीं दिया। स्वामी सिंहद्वार को रोकते हुए इस तरह कुत्ते पर आसीन हुए, दूसरे ही पल में कुत्ता शेर के रूप में बदल गया। इस पर जयश्री ने स्वामी को पहचान लिया और उनके कंठ में वरमाला डाल

दी। स्वामी ने जयश्री को शेर पर बिठाया, इस पर देवता नाराज़ हो उस शबर युवक पर टूट पड़े। स्वामी ने उन सबका सामना किया।

स्वामी के बाणों के प्रहार से घबरा कर सभी देवता तितर-बितर हो गये, तब अपने निज रूपों में स्वामी पर दिव्य अस्त्रों का प्रयोग करने लगे। इन्द्र का वज्रायुध भी बेकार साबित हुआ। तब स्वामी अपने निज रूप में हरि हर स्वामी के रूप में प्रत्यक्ष हुए। देवताओं ने हाथ जोड़ कर कहा—"स्वामी, शरण दीजिए!"

इसके बाद स्वामी तथा जयश्री का विवाह देवताओं के बीच वैभव पूर्वक संपन्न हुआ। तब स्वामी जयश्री को साथ ले अपने निवास को चले गये।

* * * *

त्रेतायुग में आर्यावर्त में कोसल, केकय तथा वसुमित्र नामक तीन राजा आपस में बड़ी मैत्रीपूर्वक रहा करते थे। कोसल के कौसल्या, केकय के कैकेयी तथा वसुमित्र के सुमित्रा नामक कन्याएँ थीं। तीनों राजाओं के मन में एक साथ यही विचार पैदा हुआ कि अयोध्या के राजा दशरथ के साथ उन तीनों कन्याओं का विवाह किया जाय। दशरथ ने उनके विचार को मान लिया। तीनों राजाओं ने जैमिनी के द्वारा विवाह का मुहूर्त रखवाया। जैमिनी मुनि ने कहा—"मैंने विवाह का जो मुहुर्त निश्चय किया है, वह ऐसा है कि विघ्नेश्वर को साक्षी बनाकर इन कन्याओं का विवाह दशरथ के साथ संपन्न होगा! मगर विवाह के पूर्व इन कन्याओं के लिए राक्षस का खतरा बना हुआ है। इसलिए तीनों को सावधानी से रखना होगा।"

इस पर राजाओं ने तीनों कन्याओं को एक भारी पेटी में सुरक्षित रखा।

उधर नारद मुनि ने रावणासुर को बताया—"हे लंकेश्वर! दशरथजी का विवाह होने जा रहा है। याद रखो, दशरथ का पुत्र तुम्हारा संहार करेगा।"
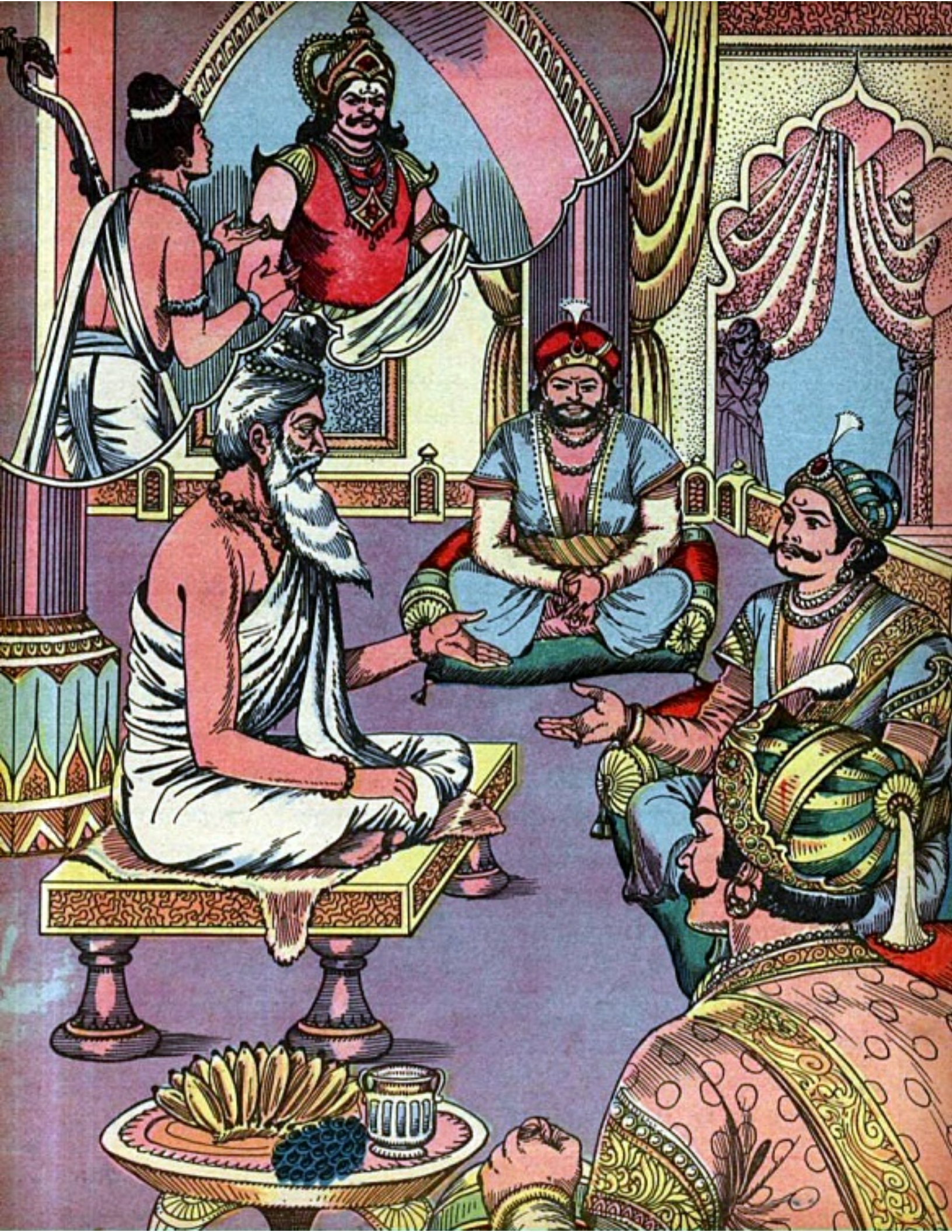
इस पर रावण ने राजकुमारियों को उठा लाने के लिए महोदर नामक एक बड़े राक्षस को भेजा। महोदर ने पता लगाया कि उन कन्याओं को एक पेटी में सुरक्षित रखा गया है। उसने उस पेटी को ही निगल डाला। वह जब आकाश मार्ग से समुद्र पर लंका को जाने लगा, तब उसके पेट में दर्द होने के कारण उस पेटी को उगल डाला। तब पेटी समुद्र में गिर गई और लहरों पर तिरते चली गई।

उस समय दशरथ समुद्र पर एक बड़ी नौका में वापस लौट रहे थे। मगर उनकी यात्रा में देरी हो गई। वे इस बात की चिंता करने लगे कि निश्चित समय पर वे अपने नगर को लौट नहीं पा रहे हैं, यही बात विचारते उन्होंने समुद्र की ओर दृष्टि दौड़ाई। तब उन्हें नौका की ओर बहकर चली आने वाली एक भारी पेटी दिखाई दी। देखते-देखते नौका से पेटी टकरा गई और उसका ढक्कन निकल गया। उसके अन्दर तीन राजकुमारियाँ दिखाई दीं। रस्सों की सीढ़ियों के द्वारा जब उन्हें नौका पर पहुँचा दिया गया, तब दशरथ ने समझ लिया कि वे जिन तीन राजकुमारियों के साथ विवाह करना चाहते थे, वे ही हैं। ठीक उसी वक़्त जैमिनी मुनि ने मुहूर्त निर्णय किया था, उस समय विघ्नेश्वर ने प्रत्यक्ष होकर तीनों राजकुमारियों के साथ दशरथ का विवाह संपन्न किया। इसके बाद वे अदृश्य हो गये। तीनों रानियों के साथ दशरथ अपने देश को लौट आये।

इस घटना के कई दिन बाद दशरथ के चार पुत्र पैदा हुए। बड़े पुत्र श्रीरामचन्द्र जी कैकेई की वजह से सीताजी तथा लक्ष्मण के साथ वनवास में चले गये। रावण ने सीताजी को उठा ले जाकर लंका में रखा। रामचन्द्रजी ने हनुमान, सुग्रीव आदि वानरों की मदद से लंका को घेरकर रावण का संहार किया। सीताजी को लेकर पुष्पक विमान में चल पड़े। सेतु वाले समुद्र तट पर रुककर रामचन्द्रजी ने

वहाँ पर शिवजी की पूजा करके अयोध्या को लौटना चाहा।

शिवलिंग को प्रतिष्ठित करने के लिए रामचन्द्रजी ने हनुमान को कैलास में भेजा। हनुमान मनोवेग के साथ कैलास पहुँचे। वहाँ के सबसे बड़े लिंग को देख उसे अपने हाथों से उठाना चाहा। पर लिंग जरा भी हिला तक नहीं, आखिर वे सबसे छोटे लिंग को भी उठा नहीं पाये।

उधर समय बीतता जा रहा था। हनुमान अपनी असमर्थता पर दुखी हो रहे थे, तब वहाँ पर एक छोटा बालक आ पहुँचा। उसने पूछा–"महाशय, तुम कौन हो? देखने में हनुमान जैसे लगते हो, मगर तुम हनुमान नहीं हो!"

"मैं हनुमान ही हूँ। रामचन्द्रजी ने मुझे एक शिवलिंग लाने के लिए भेजा है। तुम कौन हो?" हनुमान ने पूछा।

"मुझे यहाँ पर इसलिए पहरे पर बिठाया गया है कि यहाँ के लिंगों को कोई उठाकर ले नहीं जावे। पर मैंने सुना है कि हनुमान शिवजी का ही अवतार है और वह पंचमुखी आंजनेय है। लेकिन तुम्हारे पांच मुख कहाँ हैं?"

इस पर हनुमान ने गरुड़, वराह, सिंह, तथा अश्व मुखों को जोड़कर पंचमुखी आंजनेय का रूप धर लिया, आसमान तक

ऊपर बढ़ते हँसकर उस बालक से बोले–"विघ्नेश्वर, अब मेरी बारी समाप्त हो गई। पंचमुखी विघ्नेश्वर का रूप दिखाना अब आपकी बारी है।"

ये शब्द सुनकर विघ्नेश्वर अपने विश्व रूप के साथ प्रत्यक्ष हुए।

इसके बाद हनुमान ने पंचमुखी विघ्नेश्वर को प्रणाम करके कहा–"महानुभाव, जब आप बालक के रूप में मेरी तरफ बढ़े, तभी मैंने समझ लिया कि आप विघ्नेश्वर हैं। शिव लिंगों को हिलने से आपने ही तो रोक रखा है! आप ही कृपया मुझे एक लिंग प्रदान कीजिए।"

इस पर विघ्नेश्वर बोले–"हनुमान, "तुम्हारे पंचमुखी रूप के दर्शन करने के ख्याल से मैंने ऐसा नाटक रचा है। तुम शिवजी के अंश से पैदा हुए हो! तुमको रोकने वाला कौन है? फिर भी तुमने मुझसे मांगा। इसीलिए विशेष अंश वाले लिंग को तुम्हें देने के वास्ते मैंने चुनकर रखा है। इसे ले जाओ।" इन शब्दों के साथ हनुमान की अंजुली में सबसे बड़े ज्योतिलिंग को थमा दिया।

हनुमान लिंग को सावधानी से पकड़कर उड़कर चले गये। तब तक समय बीत चुका था। उधर समय से पहले ही सीतादेवी ने बालू से शिवलिंग बनाया था। रामचन्द्रजी जल से लिंग का अभिषेक करके लिंग की पूजा करने ही जा रहे थे, तभी हनुमान वहाँ पर उतर पड़े।

उसे देख हनुमान ने अपनी पूंछ से सैकत लिंग याने बालू के लिंग को लपेट कर उसे मिटाना चाहा, पर बालू का लिंग जैसे के तैसे बना रहा। इस पर हनुमान् ने कसकर अपनी पूंछ से लिंग को लपेट लिया, तब उसकी पूंछ में पीड़ा हुई, पर लिंग हिला तक नहीं।

रामचन्द्रजी ने हनुमान को शांत करके कहा–"हनुमान, बुद्धिमान लोग भी जब-तब भूल कर बैठते हैं। तुम तो सर्वज्ञ हो! भले ही यह सैकत लिंग क्यों न हो, शिवजी का रूप ही तो है! शिवजी के साथ खिलवाड़ करना किसके लिए संभव है! अब भी कुछ बिगड़ा नहीं, तुम जो लिंग लाये हो, उसे सैकत लिंग के रूप में प्रतिष्ठित कर उसकी पूजा करके तब चलेंगे।"

इस पर हनुमान अपने साथ जो लिंग लाये थे, उसे रामचन्द्रजी के हाथ देकर कान पकड़ लिये और सैकत लिंग को भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

रामचन्द्रजी ने हनुमान के द्वारा लाये गये लिंग की प्रतिष्ठा करके यथा विधि सीताजी के साथ उसकी पूजा की। तब सबके साथ पुष्पक विमान पर सवार हो अयोध्या को लौट गये।

गंधर्व राजकुमारी

[२]

हसन के बेहोश होते ही वृद्ध व्यक्ति चिल्ला उठा–"अरे बेटा, अब तुम मेरे चंगुल से निकल कर बच नहीं सकते !" ये शब्द कहकर वृद्ध उठ खड़ा हुआ, हसन के पैर मरोड़ कर छाती से बांध दिया, वहाँ की एक पेटी खाली कर दी। इसके बाद उस दुष्ट बूढ़े ने हसन को पेटी में डाल दिया, घर का सारा धन ले लिया, बाहर जाकर एक मजदूर को ठीक कर लाया और उसके सर पर पेटी रखकर सीधे घाट तक ढुवाकर ले चला। वहाँ पर एक नाव रवाना होने को तैयार थी। मल्लाह ने वृद्ध को देखते ही उसे पेटी सहित नाव पर चढ़वा लिया, और लंगर उठवा कर नाव को समुद्र पर खेता गया।

थोड़ी देर बाद हसन की माँ ने घर लौटकर देखा, हसन न था। पिछले दिन हसन सोना बेचकर जो धन लाया था, वह भी गायब था। पेटी में जो कपड़े रखे गये थे, वे तितर-बितर पड़े थे।

बाहर के किवाड़ खुले पड़े थे। वह अपना सर पीटते, कपड़े फाड़कर चिल्लाने लगी–"मैं जिस बात से डर रही थी, आखिर वही हो गया। अब मैं अपने बेटे का चेहरा नहीं देख सकती।"

इसके बाद वह अपने बेटे के नाम मकान के बीचों-बीच एक मक़बरा बना कर दिन-रात उसका पहरा देते रोते हुए अपने दिन काटने लगी।

हसन पर जादू का प्रयोग करके उसे अपने साथ ले जाने वाला बूढ़ा फारस का एक भयंकर मांत्रिक था। उसका नाम बेहराम था। उसने अपनी जादू की विद्याओं के पीछे कई मुसलमान जवानों

की बलि चढ़ाई थी। इस बार हसन उसके हाथ लगा।

समुद्र की यात्रा समाप्त होने तक बेहराम हसन को पेटी में ही रखकर नशीली दवा मिलाया गया खाना देता रहा। कुछ दिन बाद जहाज समुद्र के उस पार पहुँचा। बेहराम जब पेटी के साथ किनारे पर उतरा, तब जहाज वापस चला गया। बूढ़े ने हसन को पेटी से बाहर निकाला, उसके बंधन खोल दिया, तब उसका नशा उतारने के लिए कोई दवा सुंघवा दी।

हसन ने जब आँखें खोलकर देखा, तब वह समझ गया कि वह एक समुद्र के किनारे पर है। उसे यह भी पता चला कि वह उसका देश नहीं है। क्योंकि उस समुद्र के तट पर बालू में काले, सफेद, हरे व लाल रंग के कंकड़ थे। इस पर वह अचरज में आकर खड़ा हो गया। तभी उसके पीछे एक चट्टान पर बैठा वह बूढ़ा दिखाई दिया। तब हसन ने जान लिया कि वही बूढ़ा उसे धोखा देकर यहाँ पर ले आया है और उसकी माँ की कही बातें सच निकली हैं।

हसन ने बूढ़े के पास जाकर पूछा—"बाबा, यह सब क्या है? आपने तो हमारा नमक जो खाया है!"

बूढ़ा खिल-खिलाकर हँस पड़ा और बोला—"अग्नि की पूजा करने वाले बेहराम के लिए किसी के नमक खाने का कोई मतलब नहीं रखता! तुम जैसे नौ सौ निन्यानबे मुसलमान युवकों की अब तक मैंने बलि चढ़ाई है! तुम एक हज़ार की पूर्ति करने वाले हो! अब मेरी पकड़ से बच नहीं सकते! तुम अपने देवता को छोड़ मेरे जैसे अग्नि की पूजा करो।"

ये बातें सुन हसन एकदम नाराज़ हो उठा और जोर से गरज उठा—"अरे दुष्ट बूढ़े, यह तुम क्या कहते हो?"

दूसरे ही पल में बेहराम नरम पड़कर बोला—"बेटा, मैं सिर्फ़ तुम्हारी जांच करने

के लिए ऐसा बोला। शबाश! तुम मेरी परीक्षा में सफल निकले! तुम्हें किसी एकांत प्रदेश में अपनी विद्या सिखलाने के ख्याल से यहाँ पर ले आया हूँ। लो, दूर पर सामने उस पहाड़ को देख रहे हो न? उसकी चोटी बादलों से कहीं ऊपर है। इसलिए उसे बादलों का पहाड़ पुकारते हैं! हमें जो जड़ी-बूटियाँ चाहिए, वे सब उस पहाड़ पर मिल जाती हैं! अब हमें उस पहाड़ पर चढ़ना होगा!"

बूढ़े के मुँह से ये बातें सुनने पर हसन की शंका थोड़ी कम हुई। उसने पूछा–"वह पहाड़ तो एक दीवार जैसा लगता है, उसकी चोटी पर हम कैसे चढ़ सकते हैं?"

"हमें उस पर चढ़ने की जरूरत नहीं है, पक्षियों की तरह उड़कर उस पर उतर जायेंगे।" ये शब्द कहते बेहराम अपने कंधे पर के वस्त्र में से एक तांबे की डुग्गी निकाली। डुग्गी पर मुर्गे का चमड़ा चिपकाया गया था। उस चमड़े पर कोई बीजाक्षर लिखे गये थे।

बेहराम ने अपनी उंगलियों से जब डुग्गी बजाई, तब ऊँचाई तक धूल उठी, उसमें से एक काले पंखोंवाला एक घोड़ा प्रत्यक्ष हुआ। उसकी नाक से ज्वालाएँ उठ रही थीं। बेहराम उस पर जा बैठा और हसन को हाथ का सहारा देकर अपने पीछे बिठा लिया। तुरंत घोड़ा अपने पंख फड़-फड़ाकर फुर्र से हवा में उड़ा, पलक मारने की देरी में बादलोंवाले पहाड़ की चोटी पर जा उतरा। इसके बाद बेहराम और हसन उस घोड़े पर से उतरे, तब वह घोड़ा गायब हो गया।

हसन के मन में फिर से शंका पैदा हुई। उसने चारों तरफ़ नज़र डालकर देखा, पर वहाँ किसी तरह की जड़ी-बूटियाँ न थीं। इस बीच बेहराम ठठाकर हँस पड़ा और बोला–"अब तुमको कोई बचा नहीं सकता।"

हसन का क्रोध उमड़ पड़ा, उसने गरजकर कहा–"अरे नीच, मुझे अल्लाह

का सहारा है। देखते रहो, अल्लाह की मदद से तुम्हारा कैसे बुरा हाल कर सकता हूं?" यों कहते हसन ने एक हाथ से बूढ़े के हाथ की तांबे की डुग्गी छीन ली और दूसरे हाथ से अपनी सारी ताक़त लगाकर बूढ़े को पहाड़ पर से नीचे ढकेल दिया। बेहराम हवा में चक्कर काटते जान के डर से चिल्लाते पत्थरों पर गिरकर चूर-चूर हो गया।

इस तरह हसन ने न केवल अपने को बुरी मौत से बचाया, बल्कि अपने दुश्मन बेहराम के चंगुल से मुक्त हो गया। उसने डुग्गी को उलट-पलटकर देखा। मगर उसकी समझ में न आया कि उसका उपयोग कैसे किया जाय? इस पर उस डुग्गी को अपनी कमर में बांधकर हसन ने चारों तरफ़ नज़र दौड़ाई।

वह जिस पहाड़ की चोटी पर था, वह बादलों से कहीं ऊँची थी, लेकिन अब सारा प्रदेश एक विशाल समतल प्रदेश सा लग रहा था। उस पर कहीं कोई पेड़ या पौधा तक न था। वह सारा प्रदेश एकदम पथरीला था। उस मैदान के एक छोर पर हसन ने अपने को पाया। उसके दूसरे छोर पर जलते हुए शोले उसे दिखाई दिये। हसन यह सोचते उन शोलों की ओर आगे बढ़ा कि जहाँ मनुष्य नहीं हैं, वहाँ पर शोले भी न होंगे।

जब वह शोले के समीप पहुंचा, तब वे शोले एक विशाल महल के रूप में बदल गये। उस महल के चार विशाल स्तम्भ थे। उन पर एक गोल गुम्बज था। खंभों, गुम्बज तथा महल पर सोने का मुलम्मा चढ़ाया गया था। सूरज की रोशनी उस सोने के महल पर चमचमा रही थी, उस चमक को देख हसन भ्रम में पड़ गया था कि वे एक प्रकार के शोले हैं।

हसन शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से भी एकदम थक गया था। वह सोचने लगा–"यह महल मनुष्यों के निवास करनेवाला नहीं है। इसमें कोई यक्ष या

गंधर्व निवास करते होंगे। फिर भी यहाँ पर कोई पहरेदार होगा। उससे पानी माँगकर पहले मैं अपनी प्यास बुझाऊँगा। इस महल के किसी कोने में थोड़ी देर आराम करूँगा।" यों सोचते हुए पत्थर में तराशे गये द्वार से होकर उसने महल के भीतर क़दम रखा।

हसन ने दो-चार क़दम आगे बढ़ाये ही थे कि उसने देखा कि दो कन्याएँ संगमरमर के चबूतरे पर बैठे शतरंज खेल रही हैं। पहले उन कन्याओं ने हसन को नहीं देखा, पर थोड़ी देर बाद उनमें से छोटी युवती ने सर उठाकर अपने समीप खड़े युवक को देखा और बड़ी युवती से बोली–"दीदी, देखो, कोई युवक आया हुआ है। दुष्ट बेहराम हर साल ऐसे युवकों को बादलोंवाले पहाड़ पर लाया करता है। शायद इस युवक को भी वही ले आया होगा। अगर यह बात सच है तो उस मांत्रिक के हाथ से कैसे यह बचकर निकल आया होगा? यह तो बड़े ही आश्चर्य की बात है न?"

हसन उस युवती के पैरों पर गिरकर बोला–"बहन, मैं भी एक ऐसा ही अभागा हूँ।" यों कहते उसने अपनी आँखों में आँसू भर लिये। उसकी इस बुरी हालत पर उस युवती को अपार दया आ गई।

उस युवती ने अपनी बड़ी बहन से कहा–"दीदी, मैं इस युवक को अपने छोटे भाई के रूप में पालना चाहती हूँ। इसके लिए तुम्हीं गवाह हो।"

इसके बाद वह युवती हसन को महल के अन्दर ले गई। उसके स्नान आदि का इंतजाम करके पहनने के लिए नये कपड़े दिलाकर उसके पुराने कपड़े फेंकवा दिये।

इसके बाद दोनों बहनों ने हसन को अपने बीच बिठाकर खाना खिलाया।

खाने के बाद हसन ने उन बहनों से कहा–"हे मेरी दीदियो, आप दोनों के दर्शन के पहले मैंने बहुत सारी यातनाएँ झेली हैं।" इन शब्दों के साथ उसने उन्हें अपनी सारी कहानी सुनाई।

(और है।)
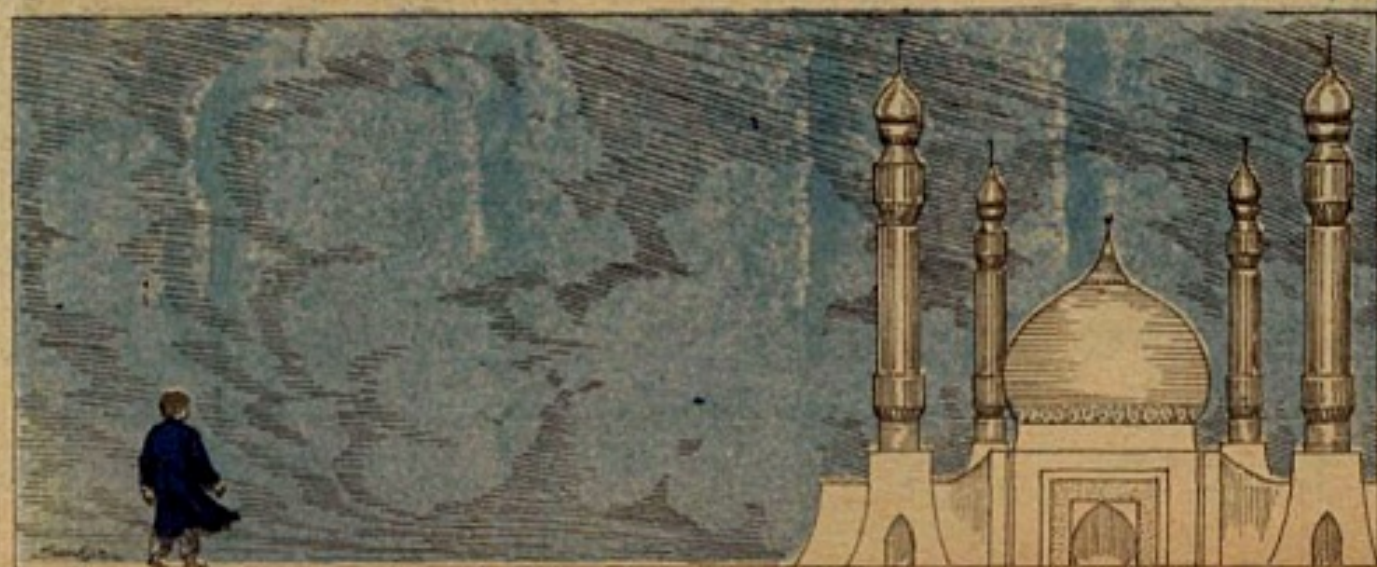
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां फरवरी १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

D. Janardhan Raju

★

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसम्बर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अक्तूबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **बज उठा ढोल!**

द्वितीय फोटो : **भिक्षा मिलती बिना बोल!!**

प्रेषक : **उदित नारायण,** सी-१२८, पो. आ. सूर्य नगर, यू. पी. बार्डर, गजियाबाद

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
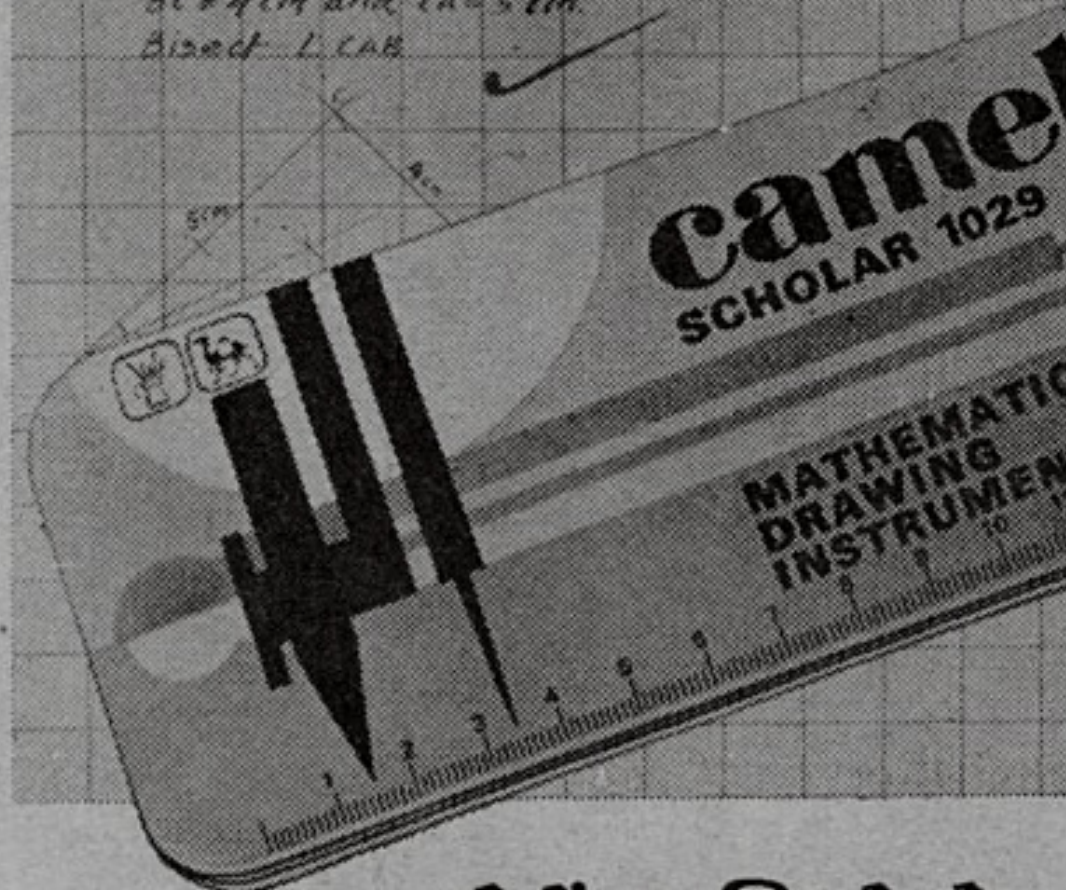
Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 21 (Hindi)

1st Prize: Sonu Bhatia, New Delhi-110 059. *2nd Prize:* Manoj Kumar Verma, Udaipur. *3rd Prize:* Rajkumar Sharma, Sujanpur. *Consolation Prizes:* K. Anuradha, Rourkela-3; Surjeet Kour, Karnal-137 001; Sanjay Jha, Amritsar; Rachana Agarwal, Barabanki; Ravindra-Jain, Durg.

आ गया ज़ोरो!

बांका बहादुर ज़ोरो के यादगार कारनामों की शुरूआत तुम्हारे मनपसंद चन्दामामा क्लासिक्स और कॉमिक्स में

अब दुकानों पर—हिंदी में!

दिलचस्प, रमणीय, रंगीन—केवल २ रूपये में एक प्रति.

वार्षिक सदस्यताशुल्क केवल ४२ रुपये

वॉल्टडिसनी की

विचित्र पुरी

कॉमिक्स जगत् को एक नयी देन

चन्दामामा क्लासिक्स और कॉमिक्स

7117-HN